पथ के साथी

भाग-2

(पूज्य आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी की तत्त्वदृष्टि)

प्रस्तुति

आर्यिका श्री आदित्यमती माताजी

प्रकाशक

धर्मोदय साहित्य प्रकाशन

सागर (म. प्र.)

पथ के साथी भाग-2

(पूज्य आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी की तत्त्वदृष्टि)

प्रस्तुति	:	आर्यिका श्री आदित्यमती माताजी
संस्करण	:	द्वितीय, फरवरी, 2013
आवृत्ति	:	1100 प्रतियाँ
ISBN	:	978-93-82950-03-5
मूल्य	:	20/-
प्राप्ति स्थान	:	धर्मोदय साहित्य प्रकाशन जैन मंदिर के पास बाहुबली कॉलोनी, सागर (म. प्र.) 094249-51771 **E mail-dharmodayat@gmail.com**
मुद्रक	:	विकास आफसेट, भोपाल

मेरी माँ

अभीक्ष्ण ज्ञान सम्पत्ति की स्वामिनी, जिनकी करुणा फूल से भी ज्यादा कोमल, जिनका ज्ञान सागर से भी गहरा, जिनके प्रवचन अमृत से भी तृप्तिकर, जिनका तप अग्नि से भी दीप्तिमान, जिनकी दया वृक्ष से भी विशाल, अद्भुत अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न आत्मा ने इस धरा पर नारी रूप में अवतरित होकर न केवल स्वयं का कल्याण किया है वरन् मानवता के उपवन को सुंदर रूप से सजाने-सँवारने के लिए ही आर्यिका बनकर इस भूतल पर विचरण कर रही है।

आपके व्यक्तित्व में सम्यग्दर्शन की महिमा, सम्यग्ज्ञान की गरिमा, सम्यक्चारित्र की परिपक्वता, साधु की समता, माँ की ममता, शिष्य की विनम्रता, शिशु सी सरलता, विरागी की निस्पृहता कूट-कूट कर भरी है।

आपके दिव्य व्यक्तित्व व कृतित्त्व की प्रखर रश्मियों का पुञ्ज आज समाज व देश के अंधकार को नष्ट करने में सहायक है।

आपके चुंबकीय व्यक्तित्व से प्रत्येक प्राणी चाहे वे त्यागी व्रती, महाव्रती ही क्यों न हो, सभी सम्मोहित होते हैं। आपकी सौम्य छवि मन को छुए बिना नहीं रहती है। वाणी में मंत्र-सा प्रभाव, मिश्री सी माधुर्यता, सम्प्रेषण की तीव्रता निहित आप एक आत्म-साधिका होने के साथ-साथ सिद्धहस्त लेखिका भी हैं आपकी बहुचर्चित कृतियाँ तत्त्वार्थ मंजूषा, चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा, 53 भाव प्रश्नोतर मंजूषा, शील मंजूषा, संस्कार मंजूषा, पलायन क्यों? अनर्थदण्ड क्या? आदि प्राज्ञ जगत् के साथ-साथ जनमानस को भी दिशा निर्देश देकर स्वर्ग के सुखों का अनुभव करा देती हैं। इहलोक व परलोक को सुधारकर मोक्षमार्ग पर बढ़ा देती हैं। आपकी दिव्य चेतना से जब विवेक और अहिंसा धर्म पर सूक्ष्म चिंतन के साथ शब्दों की बौछारें निकलती है और जनमानस पर

वचनामृत की वर्षा होती है तो लाखों करोड़ों आत्माओं के हृदय में मिश्री सी घुल जाती है। आपके चिंतन से, मंथन से, लेखन से, आचरण से ब्राह्मी, सीता, अंजना की संस्कृति साकार हो रही है, जिससे श्रमणी परम्परा गौरवान्वित होती है। तपश्चर्या में समर्पित, अध्यात्म सृष्टि में विचरण करने वाली गुरु माँ ने अपनी सामाजिक सुधार वृत्ति से परिपूर्ण रचनाओं से ज्ञान पिपासुओं की प्यास बुझाने वाले अपने बहुमूल्य आदर्शों से भरे प्रवचनों के द्वारा जन-जन की ग्रीष्मकालीन सी तपन में भी शीतल शांत सरोवर की अनुभूति करा देती है।

सागर की विशालता, आकाश की असीमता, चंद्रमा की शीतलता, सूर्य की आतपता और हिमालय की उत्तुंगता के बारे में सदियों से लिखा जा रहा है, लिखा जा सकता है, परंतु गुरु माँ की उदारता, सहृदयता, वात्सल्यता, सहिष्णुता, परोपकारिता, निस्पृहता, सहजता, सरलता के बारे में कुछ कहना, लिखना, लिख पाना संभव नहीं है। आपकी आगमनिष्ठ चर्या और भोलापन सामान्य जन को नहीं प्राज्ञजनों को भी आकर्षित किए बिना नहीं रहता है। जिनके वात्सल्य कोश में धनी-निर्धन, साक्षर-निरक्षर, कुरूप-सुंदर, छोटे-बड़े का भेद नहीं है, सभी बराबर हैं।

आज से सदियों पूर्व भरत के भारत में गणिनी आर्यिका ब्राह्मी-सुंदरी, चेलना-चंदना, सीता-अंजना आदि आर्यिकाओं ने अपनी चर्या से, आचरण से, त्याग-तपस्या से धर्म प्रभावना का डंका बजाया था, वहीं आज उस ही प्रकार से पू. आर्यिका श्री अपनी आगमोक्त चर्या से, साधना से, ध्यानाध्ययन से, साहित्य से चारों तरफ जिनशासन की प्रभावना का डंका बजा रही हैं। जिस मार्ग से आप निकल जाती हैं, वहाँ की धूल पवित्र आचरण युक्त पावन चरण के संस्पर्श से चंदन की उपमा धारण करके महक उठती है।

अध्यात्म पंथ, वीतराग पंथ, दिगम्बर संतों का पंथ, रत्नत्रय की साधना का पंथ और संयम पंथ आदि की निर्बाध गति ही संत जीवन की गति होती है। और गतिमान संत ही बाह्य जगत् में धर्म-प्रभावना करते हुए भी अपने अंतरंग

जगत् को साधना के माध्यम से प्रशस्त रखते हैं। परम-पूज्य आर्यिका श्री भी उसी पथ की पथिक हैं और आपके अंतरंग और बाह्य जगत् में अद्भुत सामंजस्य है। सूर्य समा तेजस्विनी चंद्र समा शीतल, समुद्रवत् गंभीर, पृथ्वी सदृश धीर, सिंह समान उद्यमी, हित-मित-प्रिय भाषिणी, वात्सल्य की प्रतिमूर्ति, जिनधर्म प्रभाविका, निष्पृह साधिका, सत्पथ-प्रदर्शिका, विशाल हृदया, मधुर-मुस्कान, धर्मध्यानी, असीम स्नेह प्रदातृ मंदहास्यस्मित चेहरा, उन्नत-भाल, चमकता हुआ मुखमण्डल, स्वर्णसमा पीत वर्णी, अहिंसक दिन-चर्या, कुशल संघ संचालिका पूज्य गुरु माँ के चरणों में बारम्बार वंदामि.....।

इसी भावना के साथ .....

संयम सुरभि से खिले मेरा मन उद्यान।
शुभाशीष दे दीजिए, मम गुरु माँ विज्ञान॥

आर्यिका आदित्यमती

आयिका माँ श्री विज्ञानमती माताजी ससंघ के रावतभाटा 2010 के चातुर्मास के दौरान प्रायोगिक एवं सैदांतिक जो मार्मिक उद्बोधन मिला, उससे सर्व जनमानस का जीवन विकासोन्मुख हो गया। आर्यिका माँ ने जो निष्परिग्रहवृत्ति एवं आगमोक्त चर्या अभूतपूर्व अनिवर्चनीय अनुभूत हुई। चर्चा एवं चर्या अर्थात् दर्शन-ज्ञान-चारित्र रूपी रत्नत्रय की त्रिवेणी का संगम अनवरत प्रवाहित है। पंचमकाल में इस भारतभूमि पर अबाधित रूप से भगवान् महावीर की देशना को माँ श्री के माध्यम से सतत् भव्य जीवों को कल्याण का मार्ग मिल रहा है। स्मृति, प्रेरणा एवं आत्मविश्वास निमित्त लघु संकलन पथ के साथी भाग-2 प्रस्तुत है। जो बुद्धि, मन और आत्मा को परिमार्जन-परिशोधन करते हुए आत्मोत्थान का हेतु बने।

इसी भावना के साथ.....

संदीप जैन

अनुक्रम

1.	समझदार को इशारा काफी है	9
2.	छूमंतर हो गया	10
3.	औषधि ढूँढ रही हूँ	10
4.	सहानुभूति भी कुछ है	11
5.	सेवा से मिला मेवा	12
6.	प्रथम सर्वोत्कृष्ट क्यों ?	13
7.	पति को स्वाध्याय सुनाना	14
8.	मंत्र बना औषधि	16
9.	तस्वीर से मिला आत्म संबल	17
10.	वृद्धावस्था सी आ गयी	17
11.	केवलज्ञान का कारण बनेगा	18
12.	सोचो कहाँ नहीं जन्में	19
13.	लक्ष्य मोक्ष है	20
14.	धर्म भी होगा	21
15.	मुझे तो बाहुबली जैसे बनना है	22
16.	जिनदर्शन करते ही उपवास करूँगी	23

17. बेटा ठीक हो गया 24
18. पुरस्कार बना उपकरण 26
19. तस्वीर से खिली तकदीर 27
20. फूले नहीं समाये थे 28
21. अवसर मिला है तो उपयोग कर लो 29
22. विचलित न होऊँ 30
23. दुर्लभता से तो मिला है 31
24. यह स्वाध्याय का फल है 33
25. अपूर्व – सजगता 34
26. अदम्य साहस 36
27. स्वाभिमानी वृत्ति 38
28. नियम को बनाया यम 39
29. तुम्हारे कपड़े रंगीन हैं 40
30. अनूठा-समर्पण 41
31. मैं मात्र आर्यिका हूँ, आर्यिका 43
32. असाता बदली साता में 44
33. कंचन दीदी की सीख 46
34. आप सच में गोबर गणेश सी हैं 47

35. सभी देखते रह गए 48
36. दिन रहते-रहते ही भोजन परोसना 50
37. तीन तो क्या तीस लाख आ गए 51
38. मितव्ययता और सदुपयोग 53
39. सुनहरी-गर्मी 54
40. गुरु दर्शनोपरांत ही मिलेगा यात्रा को विराम 58
41. मैं साधु हूँ 60
42. 108 वंदना पूर्ण होंगी तब... 61
43. परीक्षा में हुए पास 62
44. मात्र दिखता था लक्ष्य 64
45. संक्लेश नहीं 64
46. विवेक से करें काम 65
47. अनुपम वात्सल्य 67
48. क्षयोपशम नहीं क्षायिक चाहिए 69
49. (जिनवाणी पर अद्भुत श्रद्धा) अतिशय सजगता 70
50. याद रखो घर किसलिए छोड़ा है ? 71
51. अद्भुत वैराग्य 74
52. सूर्य ने भी साथ दिया 75

1. समझदार को इशारा काफी है

प्रसंग दीक्षा लेने का है। आचार्य कल्प श्री विवेकसागरजी महाराज ने ब्र. कुसुम दीदी से कहा कि अब दीक्षा लेना चाहिए दीक्षा लेकर आत्मकल्याण करना चाहिए और कहा कि –

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।

पल में परलय होत है, बहुरि करेगा कब॥

गुरु की बात सुनकर दीदी ने दोपहर में ही दीक्षा का श्रीफल चढ़ा दिया तो महाराज श्री ने फिर कहा –

बिना विचारे जो करे, सो पाछे पछताय।

काम बिगारे आपनो, जग में होत हँसाय॥

फिर गुरु के वचन सुनकर वो असमंजस में पड़ गयीं। अब क्या करें? उनकी भावना तो बहुत थी दीक्षा लेने की लेकिन अकेली आर्यिका कैसे रहेगी? सो योग्य साथी के अभाव में सोच नहीं पा रही थीं, इन सब चर्चाओं में मैं भी उनके साथ थी, मेरी तो भावना पहले से ही दीक्षा लेने की थी पर आँख का ऑपरेशन होना था सो मैंने संकल्प कर लिया क्योंकि गुरु का इशारा सभी के लिए था और समझदार को इशारा काफी है। गुरु का संकेत मिल ही गया था आगे बढ़ने का। गुरु की वृत्ति ऐसी ही होती है कि पहले आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं। फिर परीक्षा भी करते हैं कि कितनी दृढ़ता है, कितना उत्साह है, अपने लक्ष्य के प्रति कितने सजग हैं। पगडंडी पर चलना कठिन नहीं है, लेकिन पगडण्डी बनाकर चलना उस पर भी सही गंतव्य पर सुरक्षित पहुँचना बहुत कठिन है। दीदी श्वेताम्बर सम्प्रदाय से भी थी और संघ में पहले कोई आर्यिका नहीं थी, इसलिए भी दीक्षा लेने में बाधा आ रही थी। उसी समय से आज तक मैं हर समय गुरु के इशारों/संकेतों को ध्यान में रखती हूँ और मुझे हर काम में

सहजता इस सूत्र रूप सूक्ति के माध्यम से ही लगती है।

हम बड़े सौभाग्यशाली हैं, पूज्य आर्यिका श्री आपके चरणों में आकर!

गुरु संकेत को ही सूत्र मानकर उसी को अपनी क्रियाओं का अंग बना लिया है आपने। श्लाघनीय है आपकी गुरु के प्रति श्रद्धा और प्रशस्त है आपकी लक्ष्य के प्रति सजगता।

हम भी आप जैसे बने इसी भावना के साथ.....

वंदामि

2. छूमंतर हो गया

एक बार मेरे पैरों में बहुत दर्द हो रहा था। 5 मिनिट भी स्थिर नहीं बैठ पा रही थी। फिर भी जैसे-तैसे 48 मिनिट की सामायिक मुश्किल से कर पायी। न बैठे चैन थी, न खड़े चैन थी, न सोया जा रहा था। मैंने सोचा क्या करूँ, क्या न करूँ... विकल्प हो रहे थे फिर मैंने विचार किया, इतने विकल्प क्यों करूँ? मैं तो पूज्या आर्यिका श्री के पैर दबाती हूँ। मैं गुरु माँ के पैर दबाने लगी तो माताजी ने मना कर दिया लेकिन पुनः निवेदन किया कि 5 मिनिट दबाकर छोड़ दूँगी। मैंने जैसे ही गुरु माँ के पैर दबाये तो मेरे पैरों का दर्द छूमंतर हो गया, उसके बाद मैंने डेढ़ घंटे तक एकाशन से णमोकार मंत्र की माला फेर ली। गुरु माँ के चरणों को छूते ही मेरे पैरों का असहनीय दर्द तत्क्षण समाप्त हो गया तो जब उनके आचरण को छू लूँगी तो निश्चित ही कर्मों का दर्द भी (समाप्त हो जायेगा) अंत को प्राप्त हो जाये तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

कर्मों का नाश करने का पुरुषार्थ कर सकूँ, इसी भावना से गुरु माँ को प्रणाम-प्रणाम-प्रणाम।

3. औषधि ढूँढ रही हूँ

एक बार आर्यिका संभवमती जी को गुरु माँ के दर्शन नहीं हो पा रहे थे तब उन्होंने अग्रजा वृषभमती से पूज्या आर्यिका श्री का स्वास्थ्य पुछवाया सो

आर्यिका वृषभमती जी ने आकर गुरु माँ से कहा कि संभवमती आपका स्वास्थ्य पूछ रही हैं-सुनकर माताजी बोली क्यों पूछ रही हैं?

आर्यिका वृषभमतीजी - आपने आज तीन दिन के उपवासों की पारणा की है, सो वे आपका स्वास्थ्य पूछ रही हैं।

पूज्य आर्यिका श्री - आपने क्या उत्तर दिया उनको?

वृषभमतीजी - मैं क्या कहती, आप बताइए; वो मैं उनसे कह दूँगी।

पूज्य आर्यिका श्री - माताजी व्यवहार से तो मैं बाहर से स्वस्थ ही हूँ और अंदर से आत्मिक स्वास्थ्य पूछो तो अनादि से रोगी हूँ, उसी को ठीक करने के लिए औषधि ढूँढ़ रही हूँ। पूर्ण स्वस्थ होना चाहती हूँ। आप आज ही नहीं कभी भी कोई मेरा स्वास्थ्य पूछे तो यही उत्तर दिया करो।

सुनकर सभी चकित हुए से आर्यिका श्री का मुखारविंद देखते रहे। धन्य हो माताजी आप जो प्रत्येक समय अपने लक्ष्य के प्रति जागरुक रहती हैं, हम भी आप जैसी धारणा बनायें, इसी भावना से... वंदामि।

4. सहानुभूति भी कुछ है

प्रसंगवशात् एक ब्र. बहिन ने कहा - माताजी मुझे तो ऐसा लगता है कि संसार में किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। सभी अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। सुनकर पूज्य माताजी ने कहा - नहीं बहिन, ऐसा नहीं है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, वह कभी अकेला नहीं रह सकता है। हाँ आत्मविश्वासी बनो, स्वावलम्बी बनो। लेकिन संसार में कोई साथ नहीं देता, ऐसी धारणा मत बनाओ। परिस्थिति में पैसा देना, समय देना ही सहयोग नहीं है, वरन् सहानुभूति के दो शब्द भी जिंदगी को संबल प्रदान करते हैं। सांत्वना भी कुछ है। मैं दोनों माताजी की सल्लेखना के बाद जब अकेली रह गयी थी, तब एक महिला ने उस समय मुझसे कहा कि - आप मुझे दीक्षा दे दो मैं आपके साथ रहूँगी। भले ही आज तक उसने दीक्षा नहीं ली परन्तु तत्काल वचनों के सहयोग से मुझे आत्मसंतोष हुआ और इन पाँच बहिनों ने दीक्षा लेकर मेरा सहयोग नहीं दिया होता तो मैं क्या करती

अकेली। अतः बहिन ऐसा नहीं है कि जड़ वस्तु (पैसा) ही काम देगा, चेतन भी समय पर काम आते हैं, बस होना चाहिए अपनी सकारात्मक सोच!

सुनकर उस बहिन को भी सही लगा, वह बोली माताजी मैं भी अपनी धारणा को बदलने का पुरुषार्थ करूँगी। आप जैसा साहस मेरे अंदर भी आये। मैं भी प्रत्येक समय प्रसन्न रह सकूँ, ऐसे शुभाशीष हेतु आपके श्री चरणों में नमस्कार हो.....।

5. सेवा से मिला मेवा

प्रसंग है करमाला वर्षायोग के बाद गोमटेश बाहुबली भगवान् के दर्शन करने जाते समय का। श्रावकों की गाड़ी का ड्राइवर (जो हिन्दू था) ब्र. बहिनों के द्वारा परोसा गया शुद्ध भोजन करता था और संत समागम से वो पू. आर्यिका श्री के चरणों में समर्पित भी था। संसार में कर्म का उदय किसी को नहीं छोड़ता है। उसके भी तीव्र असाता के उदय से नाभि में गाँठ हो गयी, उसमें पीव पड़ गयी। डॉ. को दिखाया तो डॉक्टर ने ऑपरेशन के लिए कह दिया। ऑपरेशन की सुनकर वह बहुत घबरा गया। पूज्य आर्यिका श्री के पास आकर रोने लगा। माताजी मैंने इतनी मेहनत से 10-15 हजार रुपये कमाये हैं, वो भी ऑपरेशन में लग जायेंगे, आप आशीर्वाद दे दो मैं ऐसे ही ठीक हो जाऊँ। पूज्य आर्यिका श्री ने कहा - घबराओ नहीं ठीक हो जाओगे, भगवान् का नाम लो तुम्हें णमोकार मंत्र आता है, उसको पढ़ा करो... जल्दी ही ठीक हो जाओगे। उसने णमोकार मंत्र का जाप करना शुरू कर दिया। दो-तीन दिन में संघ गोमटेश बाहुबली के चरणों में पहुँच गया। तब पूज्य आर्यिका श्री ने उससे कहा - चलो तुम पर्वत पर भगवान् के दर्शन करने तो चलोगे? वो बोला माताजी मुझसे नहीं चढ़ा जायेगा पर्वत। पूज्य माताजी ने कहा - घबराओ नहीं धीरे-धीरे चढ़ना चढ़ जाओगे और वह पूज्य माताजी की बात मानकर श्रद्धा के साथ धीरे-धीरे पर्वत चढ़ गया। भगवान् के दर्शन किए और गंधोदक लिया माताजी ने कहा तुम णमोकार मंत्र पढ़कर नाभि में लगा लो ठीक हो जाओगे और उसने श्रद्धा के साथ णमोकार मंत्र

पढ़कर गंधोदक जैसे ही नाभि पर लगाया वैसे ही गाँठ कहाँ गयी पता ही नहीं चला। वह भगवान् को बारम्बार नमस्कार करता हुआ, माताजी को वंदामि करके नीचे उतर आया, नीचे आते-आते तक तो सब सामान्य हो गया। दोपहर में जब माताजी पर्वत से नीचे अपनी वसतिका में आयीं तो वह बोला माताजी मैं आपके आशीर्वाद से ठीक हो गया तो पूज्य माताजी ने कहा - मेरे आशीर्वाद से नहीं वरन् तुमने भगवान् पर श्रद्धा की और श्रद्धा के साथ णमोकार मंत्र का जाप किया था सो ठीक हो गये। तभी पास में बैठी दूसरी माताजी ने कहा- तुमने रास्ते भर बाँस घिस-घिस कर पूज्य आर्यिका श्री के पैरों में लगवाया था उसी सेवा, वैयावृत्ति का फल मिला है। सेवा से तो मेवा मिलता ही है और गुरु की सेवा निःस्वार्थ भाव से की थी तो मेवा मिलना ही था। वह बोला - पूज्य माताजी आप मुझे ऐसा शुभाशीष दें कि मैं हमेशा सभी की सेवा करता रहूँ और आप जैसे संतों की सेवा का अवसर भी मुझे मिलता रहे। इसी भावना से आपको प्रणाम-प्रणाम-प्रणाम....।

6. प्रथम सर्वोत्कृष्ट क्यों ?

किसी श्रावक ने पूज्य माताजी से कहा कि चारों अनुयोगों में प्रथम प्रथमानुयोग को क्यों रखा है?

पूज्य आर्यिका श्री : प्रथम सर्वोत्कृष्ट है क्योंकि मरण सुधारने के लिए कष्टों को सहन करने के लिए सल्लेखना के लिए प्रथमानुयोग चाहिए। समयसार से जान लिया कि आत्मा खाता नहीं है, आत्मा को गर्मी नहीं लगती है, लेकिन भूख लग रही है, गर्मी लग रही है, पसीना आ रहा है, उसको सहन कैसे करें? यह सब प्रथमानुयोग बताता है। हमारे महापुरुषों ने इस प्रकार से सहन किया था तो हम भी सहन करें उनके कर्मों का नाश हो गया। तो हमारे भी दुःखों का क्षय, कर्मों का क्षय होगा। इसलिए तो समयसार में भी प्रथमानुयोग का उदाहरण दिया - पाण्डव, राम, सगर .... वत् कहकर समझाया है। अतः प्रथमानुयोग को गौण नहीं करना चाहिए। महापुराण में देखो, पढ़ो - युद्ध का वर्णन आया है। युद्ध

स्थल में सैनिकों के हाथ-पैर कट गए हैं, घायल हो गए हैं, बेहोश अवस्था है, गिद्ध पक्षी उनके शरीर में से माँस-नोच-नोचकर खा रहे हैं, फिर उन गिद्ध पक्षियों के उड़ने से पंखों की हवा लगने से उन सैनिकों को कुछ होश आया तो उस समय होश आने पर पंचपरमेष्ठी का स्मरण करते हैं और मरकर स्वर्ग में चले जाते हैं। सोचो उनकी कितनी आस्था होगी कि मरणासन्न दशा में भी पंचपरमेष्ठी को याद कर लिया। यह सब हमने कैसे जाना? तो प्रथमानुयोग से जाना और जानकर अंदर में आस्था दृढ़ हुई और परिस्थिति आने पर कष्टों को सहन करने की शक्ति मिली। इसलिए प्रथमानुयोग प्रथम है, सर्वोत्कृष्ट है। यहाँ कोई प्रश्न कर सकता है कि जब पंचपरमेष्ठी पर इतनी आस्था थी तो युद्ध क्यों किया?

पूज्य आर्यिका श्री - आचार्य महाराज कहते हैं कि गृहस्थ के विरोधी हिंसा का त्याग नहीं होता है, अतः युद्ध किया और युद्ध करते समय भी उनके हृदय में धर्म था, पंचपरमेष्ठी पर आगाढ़ आस्था थी।

7. पति को स्वाध्याय सुनाना

आसाम से श्रावक संघ पूज्य आर्यिका श्री के दर्शन करने आया। दर्शन करने के पश्चात् एक श्राविका ने पूज्य माताजी से कहा माताजी मुझे कुछ नियम दे दो?

पू. माताजी ने कहा - तुम्हारे तो सभी नियम हैं, अब क्या नियम दे दूँ और फिर आचार्य श्री के पास जा रही हो तो उन्हीं से नियम ले लेना।

श्राविका : मैंने आपके बारे में बहुत सुन रखा, आपका साहित्य भी पढ़ा था तभी से आपके दर्शन की लगन लग रही थी, परन्तु आज पहली बार आपके दर्शन हुए हैं, मुझे तो आपसे ही कुछ नियम लेना है।

पूज्य माताजी : अब तुम नियम लेना ही चाहती हो तो ठीक है तुम यह नियम ले लो कि अपने पति को 5 मिनिट स्वाध्याय सुनाओगी।

श्राविका : माताजी वो नहीं सुनेंगे।

पूज्य माताजी : वो सुने या न सुने तुम्हें सुनाना है, वे सो भी जायें तब भी तुम सुनाना क्योंकि तुम्हारा नियम है, उन्हें सुनाने का न कि उनका नियम है सुनने का।

श्राविका : ये तो कठिन नियम है, पूज्य माताजी।

पूज्य माताजी : अच्छा ऐसा करो जब तक दुबारा दर्शन नहीं करो तब तक यह अभ्यास करना।

श्राविका : ठीक है माताजी हम अभ्यास करेंगे।

पूज्य आर्यिका श्री का शुभाशीष लेकर घर गयी और अपना अभ्यास रूप नियम निभाना शुरू किया। रात्रि में पति को स्वाध्याय सुनाने लगी। शुरू में एक-दो दिन तो पतिदेव सो गये फिर तीसरे दिन से जागकर सुना और एक सप्ताह बाद तो बैठकर स्वाध्याय सुनने लगे, उसके बाद तो स्वयं कहकर कि मुझे स्वाध्याय सुनाओ और आधा घंटे तक स्वाध्याय सुनने लगे। चाहे कितना भी काम हो, चाहे कितनी भी रात हो जाये। उस श्राविका को बड़ा आश्चर्य होता कि आखिर यह क्या हो गया मैंने अभ्यास रूप में यह कार्य किया और इतना अत्युत्तम शीघ्र फल मिला है। पूज्य माताजी ने कोई जादू की छड़ी घुमाकर ही यह नियम दिया था तभी तो हमें इतना सुखद फल मिला है। धन्य हैं माताजी आप और आपकी युक्तिपूर्ण दूरदर्शिता जो हम सभी के जीवन को उन्नति का महकता आँगन देकर मधुर सदाचरण की क्रीड़ा करने का सुनहरा अवसर देती हैं। मेरे जीवन में आर्यिका श्री के प्रथम दर्शन का परिपाक भी इतना मधुर है, महिमावान् है तो यदि चरणों में रहने का सौभाग्य मिल जाये तो मुझे संसार से मुक्ति भी मिल जाये ऐसा कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

धन्य है पूज्य आर्यिका श्री का जीवन जो पाषाण हृदयों में भी धर्म की रसधार बहा देता है और देता है ऐसा आदर्श-आलोक जिसकी रोशनी में मार्ग पाकर हम अपना भविष्य उज्ज्वल बना सकते हैं।

पूज्य माँ श्री के चरणों में वंदामि .....।

8. मंत्र बना औषधि

घटना 16 जून 2005, सायंकाल पौने छह बजे की है। पूज्य आर्यिका श्री संघ सहित तमिलनाडू के तंजाउर जिले के मनारगुडी क्षेत्र से कुंभकोनम की तरफ विहार कर रहीं थीं, मनारगुडी से 5-6 किलोमीटर ही चले थे कि एक बंदर का बच्चा सड़क पर घायल-सा होकर पड़ा था, उसे देखते ही दयार्द्र हृदयी आर्यिकाश्री ने उसको बचाने का एवं णमोकार मंत्र सुनाने के लिए कहा, तभी देखा कि बहुत सारे बंदर वृक्ष पर से ही चिल्ला रहे थे और घींस भी रहे थे, उनको देखकर सभी डर गये फिर भी सड़क पर आने-जाने वाली गाड़ियों से बंदर को बचाया तभी एक बस को रुकती देखकर सभी बंदर भाग गए लेकिन उस बंदर की माँ वहीं बैठी रो रही थी, तभी उस बंदर को एक तरफ करवा करके पूज्य आर्यिका श्री ने णमोकार मंत्र सुनाना शुरू कर दिया और पूज्य गुरु माँ के मुखारविन्द से जैसे ही णमोकार मंत्र का उच्चारण शुरू हुआ और पूरा होते-होते मंत्र उसके कानों तक पहुँचा वह बंदर संचेतित होकर शांत-सा दिखने लगा, दूसरी बार णमोकार मंत्र पूरा हुआ तब तक तो वह सिर उठाकर देखने लगा और तीसरी बार के णमोकार मंत्र पूरा ही नहीं हो पाया कि वह उठकर दो-चार कदम चलकर पूज्य आर्यिका श्री के चरणों में आ गया और कमण्डलु पर मुँह रखता हुआ प्रसन्नता से सहज ही अपनी माँ के पास पहुँच गया और दोनों ही माँ बेटे झट से पेड़ पर चढ़ गए। हम सभी यह दृश्य देखकर आश्चर्य चकित रह गए। पूज्य आर्यिका श्री की णमोकार मंत्र के प्रति अगाध श्रद्धा का परिणाम और णमोकार मंत्र की अचिन्त्य महिमा को देखकर मन में ऐसा लगा कि पूज्य आर्यिका श्री को णमोकार मंत्र की सिद्धि है या असीम दया का परिणाम है या यूँ कह दो कि उनके अहिंसात्मक आचरण का फल है। तभी तो वह घायल बंदर तीन बार णमोकार मंत्र सुनते ही स्वस्थ हो गया बिना किसी औषधि के। साधु के मुख से निकली मंत्रौषधि पाकर वह शारीरिक व आत्मिक रूप से स्वस्थ हो गया था।

9. तस्वीर से मिला आत्म संबल

प्रसंग कुंभकोनम नगर का है। गर्मी का समय था। नगर में प्रवेश करते ही श्री जिनेन्द्र देव के दर्शन करके पूज्य आर्यिका श्री ने उपवास कर लिया, लेकिन दोपहर की सामायिक के बाद से ही उन्हें घबराहट होने लगी। जैसे-तैसे करके दिन निकला सोचा चलो रात्रि में ठण्डक होने से स्वास्थ्य ठीक हो जायेगा परन्तु गुरु माँ को रात्रि में भी नींद नहीं आयी और नींद नहीं आने से बेचैनी और बढ़ गयी, प्रातःकाल की सामायिक भी बैठकर नहीं कर पाये। फिर भी सुबह शौच से निवृत्त होकर श्री जिनमंदिर में श्री जी के दर्शन करके पूज्य माताजी ने सोचा बैठकर सामायिक कर ली जाय परन्तु 5-10 मिनिट भी बैठा नहीं जा रहा था... धीरे-धीरे मन बनाकर जैसे ही पूज्य गुरु माँ सामायिक में बैठी आर्यिका पवित्रमती जी ने उनके सामने आचार्य श्री की फोटो लाकर रख दी और जैसे ही आर्यिका श्री ने फोटो की तरफ देखा गुरु माँ को इतना संबल मिला कि एक घंटे तक एकाशन से सामायिक कर ली। पता ही नहीं चला, न घबराहट हुई, न उबाकी आयी। यह गुरु के प्रति आस्था और उनकी चर्या के प्रति बहुमान का फल था।

10. वृद्धावस्था सी आ गयी

प्रसंग है हम पाँच आर्यिकाओं के दीक्षा दिवस का। पूज्य आर्यिका श्री ने शुभाशीष रूप वचनामृत में स्वयं की पीड़ा रूप अनुभूति सुनायी।

आज इन लोगों के दीक्षा दिवस पर मुझे भी अपनी दीक्षा का समय याद आ रहा है। मैं तो उस समय कुछ नहीं जानती थी, बस इतनी भावना थी कि मुझे दीक्षा लेना है। ऐसा लगता था कि वर्षों बीत गए अभी तक मैं दीक्षा नहीं ले पायी हूँ। वृद्धावस्था आयी जा रही है, जीवन वृद्धावस्था की तरफ जा रहा है पर दीक्षा नहीं हो पा रही है। (सुनकर सभी को हँसी आ जाती है) तब पूज्य आर्यिका श्री ने कहा-तुम लोगों को हँसी आ रही है, लेकिन सच है 8 वर्ष की उम्र में दीक्षा ले सकते हैं, दीक्षा क्या केवलज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं, तो फिर दीक्षा लेने में

इतनी देर क्यों? 22 वर्ष की हो गयी तो 14 वर्ष देर हो गयी अभी तक दीक्षा नहीं हुई, कितनी खेद की बात है? यदि इस बीच में मौत आ जाती या देवायु को छोड़कर तीन आयु का बंध हो गया होता तो यह मानव-पर्याय व्यर्थ ही चली जाती क्योंकि 3 आयु का बंध होने पर दीक्षा लेने के भाव नहीं होते हैं। यह मानव पर्याय अनमोल रत्न है, लाखों करोड़ों भवों के बाद मुश्किल से मानव पर्याय मिली है। वो भी यूँ चली जा रही है, आत्मकल्याण कब करेंगे? 14 वर्ष यूँ ही असंयम में चले गए। यदि 8 वर्ष की उम्र में दीक्षा ले लेती तो 14 वर्ष तक संयम पालती इसलिए मैं कहती हूँ कि वृद्धावस्था में संयम लिया है। आज तुम लोग भी 5 मिनिट बैठकर सोचना कि काश मैं भी मुनि/ आर्यिका होते और अपनी आत्मा का कल्याण करते।

धन्य हैं हमारी गुरु माँ जो अपनी मानव पर्याय का हर क्षण संयम के साथ ही बिताना चाहती हैं, भगवन् से प्रार्थना है कि मैं भी गुरु माँ के शुभाशीष से उनकी ही भाँति संयम की पूर्णता को प्राप्त करूँ।

11. केवलज्ञान का कारण बनेगा

स्वाध्याय के प्रसंग में संध्याकाल के समय ब्रह्मचारी वर्ग को पढ़ने की प्रेरणा देते हुए पूज्य आर्यिका श्री ने बताया कि समझ में आये न आये इसकी चिंता मत करना बस श्रद्धा से पढ़ते जाना भविष्य में केवलज्ञान का कारण बनेगा और पढ़ते-पढ़ते ही समझ में आने लगेगा अरे कुछ भी समझ में आये न आये लेकिन इतना तो समझ में आ ही जायेगा कि क्या छोड़ना है, क्या ग्रहण करना है और दोषों को जानकर उसे छोड़ने का पुरुषार्थ करके अपने चारित्र को भी निर्मल बना सकते हो। मैं जब छोटी थी तभी से स्वाध्याय करने का शौक था। दीक्षा लेकर भी मैं बहुत पढ़ती थी। 15 दिन में 3-4 शास्त्र पूरे पढ़ लेती थी। कभी अंतराय आ जाता तो बस प्रसन्नता होती कि अब 2-3 घंटे और ज्यादा स्वाध्याय करने के लिए मिलेंगे और बैठ भी जाते थे नियम लेकर कि यहाँ से 5 बजे तक नहीं उठेंगे, लगातार 4-5 घंटे पढ़ते रहते थे। कुछ भी समझ में नहीं आता था

फिर भी एक-एक शब्द करके पढ़ते थे। कुचामनसिटी में पूरा शास्त्र भण्डार ही पढ़ लिया था। अरे एक बार तो मारोठ में एक प्रेस फैल हो गयी थी तब लोग पीछे से सुराख लगाकर पुस्तकें निकाल-निकालकर रद्दी में बेचने लगे सो एक जैन साहब के यहाँ रद्दी में महाबंध और श्लोकवार्तिक आ गए, उसने देखा तो उसे ऐसा लगा कि यह तो अपने शास्त्र हैं सो उसने हम लोगों को लाकर दिया तब मैंने उस समय ही उन शास्त्रों का अध्ययन कर लिया था यद्यपि उस समय कुछ भी समझ में नहीं आया था पर आज भी उसके प्रसंग मुझे याद हैं और अब वे समझ में आने लगे हैं। अष्टसहस्री जैसे ग्रन्थ भी 8 दिन में पूरा पढ़ लिया था, उसकी युक्तियाँ और तर्क के आधार से ही सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के स्वरूप को तत्त्वों के स्वरूप को समझने समझाने में सरलता आ जाती है। आज के जमाने के आधार से भी समझा सकते हैं और यह तत्त्वार्थमंजूषा भी उसी समय में किए गए स्वाध्याय का फल है। अतः मेरे भाइयो तुम लोगों को भी श्रद्धा से जितना स्वाध्याय कर सको करना चाहिए, कुछ समझें न समझें पर इतना तो हो ही जायेगा अपने अमूल्य समय का सदुपयोग और आर्त्त-रौद्र ध्यान से बच जाओगे और संक्लेश से बच गये तो धर्मध्यान तो हो ही जायेगा। होता ही रहेगा।

12. सोचो कहाँ नहीं जन्मे

तत्त्वार्थसूत्र की कक्षा में जब भोगभूमि और म्लेच्छखण्ड ..... आदि क्षेत्रों की व्यवस्थाएँ पढ़ रहे थे तब एक आर्यिका ने कहा पूज्य माताजी आप तो मुझे आशीर्वाद दे दो एक मंत्र सिद्ध हो जाये ताकि मैं भोगभूमि ..... आदि स्थानों पर जाकर देख लूँ कि वे 500 धनुष की अवगाहना वाले मनुष्य कैसे रहते होंगे? कैसे उनके बीबी-बच्चे होंगे? कैसे उनके आचार-विचार रहन-सहन होंगे...? आर्यिका के विचार सुनकर पूज्य आर्यिका श्री 1-2 क्षण कुछ नहीं बोली, फिर बोली - मैं म्लेच्छखण्ड में जाने का आशीर्वाद क्यों दूँ? हाँ विदेहक्षेत्र में जाकर तीर्थङ्कर के समवसरण में जाने का भाव हो तो फिर भी मैं सोचती या आशीर्वाद भी दे देती कि मंत्र सिद्ध कर लो-लेकिन मैं सोचती हूँ, हम ऐसे मंत्र-तंत्र... आदि

सिद्ध करने के भाव क्यों करें, इनसे क्या प्रयोजन है? अरे विचार करो, जरा सोचो तो हमने इस संसार में कहाँ-कहाँ जन्म नहीं लिया है, हम स्वयं कितनी बार इतनी-इतनी अवगाहना वाले बन चुके हैं? हम स्वयं उन घरों में अनंतबार जन्म ले चुके हैं, पुनः वापस वहाँ जाने की क्यों सोचें? हम तो यह सोचें कि हमारे कर्मों का क्षय हो जाये, हमें कर्मों का बंध न हो। अब हमें कहीं भी जन्म न लेना पड़े। कुछ भी न देखना पड़े, दिखने लग जाये अर्थात् ज्ञाता-दृष्टा बन जायें। जब तक यह सब देखने के भाव बनाते रहेंगे तब तक फिर-फिर इसी संसार में भ्रमण करना पड़ेगा। इसलिए अब संसार में भ्रमण न करना पड़े संसार समाप्त हो जाये ऐसा पुरुषार्थ करो। मंत्र-तंत्र सिद्ध करने की न सोचो।

13. लक्ष्य मोक्ष है

अतिशय क्षेत्र भातकुली की वंदना करके विहार किया। विहार करके बहुत जल्दी आ गए तो मैंने (आर्यिका आदित्यमतीजी ने) कहा आज तो पता ही नहीं चला कि 10 किलोमीटर चलकर आ गए हैं। चर्चा के दौरान अमरावती के एक श्रावक ने पूज्य आर्यिका श्री की परीक्षा लेने हेतु कहा कि माताजी आप तो एक मंत्र सिद्ध कर लो ताकि विहार नहीं करना पड़ेगा पाटा से उठते ही दूसरे गाँव पहुँच जाओगे? सुनकर पूज्य आर्यिकाश्री ने कहा - भैया विहार करना स्वभाव नहीं विभाव है, प्रवृत्ति है और प्रवृत्ति में बंध होता है और कर्म का बंध उपादेय नहीं है, हेय है यदि ऐसा ही करना था तो घर में ही रहते तो अच्छा था विहार ही नहीं करना पड़ता। दूसरी बात - मंत्र सिद्ध करने वाले को कभी कुछ नहीं होता है क्या? क्या कभी उनको किसी कार्य में असफलता नहीं मिलती है। पुण्य का उदय हो तो सभी काम में आ जाते हैं। पाप का उदय हो तो विद्याएँ, मंत्र-तंत्र कुछ भी साथ नहीं देते हैं। राम-रावण को देखो; रावण ने बहुरूपिणी विद्या सिद्ध की थी, राम ने कोई विद्या सिद्ध नहीं की थी फिर भी जीत गए। रावण को अपयश ही मिला, नरक में जाना पड़ा। क्या किया विद्याओं ने, मंत्रों ने? इसी प्रकार कंस ने देवियाँ सिद्ध की थीं, कृष्ण ने कुछ नहीं किया, फिर भी

कंस को ही परास्त कर दिया। इसलिए भैया यह सब मंत्र-तंत्र पुण्य के उदय में साथ देते हैं तो फिर इनको सिद्ध करने में समय खराब क्यों करूँ और मंत्र सिद्ध किया तो देव ही आते हैं, देव असंयमी होते हैं, हम संयमी होकर असंयमी को झुकें, ऐसा संभव नहीं है। यह सब बृहद् द्रव्यसंग्रह की टीका में ब्रह्मदेव सूरी ने लिखा है, कभी पढ़कर देख लेना।

श्रावक : माताजी कोई बात नहीं, अपन धर्म प्रभावना के लिए कर लो?

पूज्य आर्यिका श्री : भैया यदि यशःकीर्ति नाम कर्म का उदय नहीं है तो मंत्र-तंत्र तुम्हारा यश नहीं फैला पायेंगे और फिर मुझे धर्म प्रभावना नहीं करना है। हमें तो आत्म प्रभावना करना है। अपनी आत्मा की प्रभावना में लगे रहेंगे तो धर्म की प्रभावना तो हो ही जायेगी। संसार में यशःकीर्ति, सुख प्रतिष्ठा सभी पुण्य से मिलती है। परन्तु मुझे तो पुण्य भी नहीं चाहिए मात्र कर्म निर्जरा करना है, हमारा लक्ष्य मोक्ष है न कि पुण्य-प्राप्ति। अपने आचार्य श्री को देखो कोई मंत्र सिद्ध नहीं किया फिर भी चारों तरफ यशःकीर्ति फैल रही है उनकी चर्या,चर्चा, क्रिया, आचरण, तप, त्याग ऐसा ही है और अंतरङ्ग कारण यशःकीर्ति नामकर्म का उदय है।

सारी चर्चा एवं प्रश्नों के सटीक आगमोक्त उत्तर सुनकर वे बोले - माताजी आप अपने नाम के अनुसार ही हैं। आपके गुरुजी ने आपका सही नाम रखा है। मैं सच में परीक्षा ही कर रहा था लेकिन फैल आप नहीं मैं हो गया आपको समझने में, मुझे क्षमा करना... आपको प्रणाम.....।

14. धर्म भी होगा

महाराष्ट्र में अंतरिक्ष शिरपुर के दर्शन करने गए। तब वहाँ के ब्रह्मचारी ने पूज्य माताजी से पूछा, माताजी ये नवग्रह की पूजा क्या है? सुनकर पूज्य आर्यिका श्री ने कहा - ये नवग्रह ज्योतिषी देव हैं, इनका प्रभाव भी पड़ता है, इनकी शांति के लिए भी यदि अरिहंत देव को पूजता है तो कर्म का बंध ही होता है, एक प्रकार से मिथ्यात्व का ही पाप लगता है क्योंकि इसमें अपने इन्द्रिय-

विषयों के सुख की आकांक्षा है। शारीरिक स्वास्थ्य के लिए है। अपने घर की सुख-शांति के लिए करता है। इससे सम्यक्त्व में विशेष दोष ही लगता है। मेरे विचार से तो नवग्रह की नहीं मात्र जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करो पाप कर्म का क्षय भी होगा और पुण्य बंध भी होगा। पाप क्षय होने से पुण्य वर्गणाएँ आती हैं और पुण्य आने से सुख-शांति तो सहज ही मिलेगी और धर्म भी होगा।

15. मुझे तो बाहुबली जैसे बनना है

प्रसंग है सम्मेदशिखर जी का। कुछ भाई और बहिनें पूज्य आर्यिका श्री से शुभाशीष लेकर पर्वतराज पर वंदनार्थ चढ़ रहे थे। पर्वत पर चढ़ते-चढ़ते आपस में बातें करते जा रहे थे, तब एक भाई ने कहा - मैं तो भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि अगले जन्म में पूज्य आर्यिका श्री हमारी माँ बनें और हम उनके बेटे। सुनकर एक बहिन ने कहा - भैया ऐसा मत कहो, वरन् ऐसा बोलो कि माताजी हमारी गुरु बनें और अपन सब उनके शिष्य....। उस समय तो बात आयी गयी हो गयी। पर्वतराज की वंदना करके सभी अपने अपने गंतव्य पर चले गए। कालान्तर में वो बहिन जब पूज्य आर्यिका श्री के दर्शनार्थ आयी और उसने यह चर्चा पूज्य गुरु माँ को बतायी - सुनकर पूज्य माताजी बोलीं- अरे तुम लोगों ने ऐसी खोटी कल्पना क्यों की? मुझे तो न माँ बनना है, न किसी का गुरु बनना है, मुझे तो बाहुबली जैसा बनना है। उसमें भी बाहुबली ने तो बहुत बाद में दीक्षा ली थी, मैं तो 8 वर्ष की उम्र में ही दीक्षा लूँगी। जंगल में जाकर वृक्ष के नीचे खड़े होकर बाहुबली जैसी साधना करूँगी। दीक्षा लेते ही न आहार करूँगी न विहार। न किसी को देखूँगी, न किसी से बोलूँगी। न सोऊँगी, न बैठूँगी। मेरी भावना तो यह है कि देखूँ तो मात्र आत्मा को, बोलूँ तो आत्मा से, सुनूँ तो मात्र आत्मा की, बैठूँ तो आत्मा में ताकि मैं आत्म कल्याण कर सकूँ। अतः बहिन न गुरु बनना है, न शिष्य बनाना बस शिष्य बनकर आत्मसाधना करना है। सुनकर वो बहिन बोली-माताजी आपने ऐसा सोच लिया फिर हम लोगों का क्या होगा, हम कैसे कल्याण कर पायेंगे?

पूज्य आर्यिका श्री : बहिन! कोई किसी का कल्याण नहीं कर सकता है। कल्याण तो अपने भावों से होता है। तुम भी भावना भाओ और सही दिशा में पुरुषार्थ करो क्योंकि ऐसे ही बनने पर कल्याण होगा तभी हम सिद्ध अवस्था को प्राप्त कर पायेंगे।

बहिन : पूज्य माताजी धन्य हैं, आप और आपके भाव तथा धन्य है मेरा भाग्य जो आज मुझे आपका अध्यात्म भरा चिंतन सुनने को मिला। मैं भगवान् से प्रार्थना करती हूँ कि हे भगवन्! कर्तृत्व भाव से कोसों दूर रहने वाली (अपने) आत्मकर्त्तव्य के प्रति सजग पूज्य आर्यिका श्री के साथ रहकर मैं भी साधना करूँ और उनके जैसे ही मेरे परिणाम निर्मल हों, मेरी आत्मा का कल्याण हो....।

इसी भावना के साथ वंदामि.....।

16. जिनदर्शन करते ही उपवास करूँगी

प्रसंग है तमिलनाडू तीर्थवंदना का। श्री गोमटेश बाहुबली के दर्शन करके बैंगलोर से मदुरई की ओर विहार चल रहा था। चलते-चलते तीन-चार दिन हो गए, लेकिन श्री जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन नहीं हो रहे थे। संघ में सभी को विकल्प हो रहा था, क्योंकि भाषागत समस्या होने से न किसी से पूछ सकते थे, न पढ़ पा रहे थे कि कब किस स्थान पर जिनालय मिलेगा? लगभग 150 किलोमीटर चलने के बाद भी वीतरागी भगवान् के दर्शन नहीं हुए तो पूज्य आर्यिका श्री ने नियम ही ले लिया कि जैसे ही मुझे श्री जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन होंगे मैं उसी दिन उपवास करूँगी और भी संघस्थ सदस्यों ने अपनी-अपनी शक्ति अनुसार नियम ले लिए। सभी की भावनाओं का ऐसा प्रभाव पड़ा कि दूसरे दिन ही कुछ श्रावक आये- उन्होंने बताया कि यहाँ से 50 किलोमीटर दूर सेलम नगर है, वहाँ पर जिनालय है। आपको श्री जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन हो जायेंगे, सुनकर सभी को बड़ी प्रसन्नता हुई कि अब दो दिन में भगवान् मिल जायेंगे। श्रावकों को हम सभी की विकलता समझ में आ गई सो वे हम लोगों से पूछे बिना ही 25 किलोमीटर चलने के पश्चात् फैक्ट्री में जहाँ आहार चर्या होना थी

अपने नगर से गृह चैत्यालय लेकर आ गए। और हम लोग जैसे ही फैक्ट्री में पहुँचे तब वे बोले माताजी चलो अभिषेक देख लो तो मैंने कहा - यहाँ कहाँ मंदिर है?

श्रावक : माताजी मंदिर नहीं है? लेकिन हम सेलम से चैत्यालय लेकर आये हैं। सभी जन भगवान् के दर्शन करके प्रसन्न हो गए। परन्तु पूज्य आर्यिका श्री ने दर्शन करते ही उपवास कर लिया, क्योंकि उनका नियम था कि जिनदर्शन करते ही उपवास करूँगी। भीषण गर्मी में भी 25 किलोमीटर चलकर उपवास कर लिया और पुनः 25 किलोमीटर उपवास में ही चलना था लेकिन नियम तो नियम होता है सो दृढ़ता पूर्वक प्रसन्नता से अपना नियम निभाया। पूज्य गुरु माँ को उपवास की गर्मी और विहार की वेदना तो रंचमात्र भी अनुभूत नहीं हो रही थी वरन् उससे भी अधिक प्रसन्नता जिनदर्शन मिलने की हो रही थी अर्थात् जिनेन्द्र - दर्शन करके सारे दुःख भूल गयी थी। जिनेन्द्र गुणों में झूल रहीं थी। सच सम्यग्दृष्टि ऐसे ही होते हैं, उसे सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के प्रति बहुमान, आस्था रहती है, जब वे नहीं मिलते हैं तो दुर्लभता समझ में आती है और दुर्लभता से मिले जिन-दर्शन का दोहरा लाभ पूज्य आर्यिका श्री ने लिया।

धन्य हैं हमारी गुरु माँ और जिनेन्द्र भगवान् के प्रति उनकी श्रद्धा, आस्था, दृढ़ता। हमारे अंदर भी ऐसी श्रद्धा, आस्था, दृढ़ता बनी रहे, इसी भावना से वंदामि.....।

17. बेटा ठीक हो गया

प्रसंग है सम्मेदशिखरजी का। हम सब बहिनें जब पूज्य आर्यिका श्री के साथ गिरिराज की वंदना करके लौट रहे थे तभी एक व्यक्ति अपने बच्चे को गोद में लिए रोता हुआ आया और बोला- अम्मा, अम्मा मेरे बेटे को ठीक कर दो। बहुत ही बीमार है, हम गरीब हैं, फिर भी बहुत दवाई करवाई है इतनी दवाई करवाने पर भी ठीक नहीं हो रहा है।

पूज्य आर्यिका श्री : क्या हो गया है, इसे?

व्यक्ति : बहुत रोता है, चैन नहीं लेता है, डॉक्टर कुछ बीमारी नहीं बताता है। आप तो अपने इस कमण्डलु का पानी दे दो, इसको पिला दें।

पूज्य आर्यिका श्री : घबराओ मत ठीक हो जायेगा। भगवान् का नाम सुनाया करो। अरहंत, सिद्ध बोलकर पानी पिलाना। (मैंने कमण्डलु से पानी दे दिया।)

उसने श्रद्धा के साथ अरहंत-सिद्ध बोलकर जैसे ही कमण्डलु का पानी पिलाया और वह शांत हो गया, रोना बंद हो गया। वह जाने लगा तो कमण्डलु से थोड़ा पानी और ले गया। दो-तीन दिन बाद जब हम सब पुनः वंदना करने जा रहे थे, तब वह मिला और बोला अम्मा आपके शुभाशीष से मेरा बेटा बिल्कुल ठीक हो गया है। डाक्टरों की औषधि फैल हो गयी पर आपका आशीष फल गया। सुनकर.....।

पूज्य आर्यिका श्री : भैया मेरे आशीष से नहीं वरन् तुम्हारी श्रद्धा ने काम कर दिया, तुमने श्रद्धा से भगवान् का नाम लिया सो ठीक हो गया।

मैं दोनों समय में उपस्थित थी उस व्यक्ति का दर्द भरा द्रवित चेहरा भी मैंने देखा था और पूज्य माँ की ममता और करुणा, वात्सल्य से भरपूर चेहरा भी देखा था। चर्चा भी सुनी थी और मुझे तो उसी समय विश्वास था कि वह बालक अब ठीक हो ही जायेगा। जब गुरु माँ के मुखारविन्द से यकायक निकला था घबराओ मत ठीक हो जायेगा। ये कमण्डलु का पानी पिलाना तो औपचारिकता मात्र थी।

यह सब सुनकर देखकर लगा कि सच जो वचन अनायास निकलते हैं वे निश्चित सिद्ध होते हैं और फिर गुरु के मुखारविन्द से निकले वचन, क्योंकि ''जो बोलकर नहीं बदलते हैं'' '' जो कहते हैं वह करते हैं'' प्राण जाय पर वचन न जायें तो फिर वे अवश्य ही फलीभूत होते हैं। मम गुरु माँ के वचन भी कभी निष्फल नहीं होते हैं।

18. पुरस्कार बना उपकरण

प्रसंग है पुरस्कार का। लगभग 18 वर्ष पहले पूज्य आर्यिका श्री ने बण्डा प्रवास में ब्रह्मचारिणी बहिनों को तत्त्वार्थसूत्र पढ़ाया था और पढ़ाई पूरी होने पर परीक्षा भी ली थी। परीक्षा लेने के पहले ही कहा गया था कि परीक्षा देने वाले सभी परीक्षार्थियों को पुरस्कार मिलेगा। सभी बहिनों ने सोचा तस्वीर मिलेगी, शास्त्र मिलेंगे या फिर बर्तन .... आदि जो सामान्यतः हर जगह मिला करते हैं, वो ही मिलेगा। सो बहिनों को पुरस्कार के प्रति कोई उत्साह नहीं रहा, लेकिन परीक्षा होने के बाद जब पुरस्कार वितरित हुआ तो पुरस्कार देखकर हम सभी बहिनें विस्मित रह गए। पुरस्कार था ''पानी का छन्ना और पूजन की द्रव्य'' पुरस्कार को देखकर समाज के कई लोगों को इतना आश्चर्य हुआ कि उन्होंने उसी समय पूज्य आर्यिका श्री से पूछ ही लिया कि आपने यह पुरस्कार क्यों दिलवाया है। तब पूज्य आर्यिका श्री ने कहा - आस्था और आचरण के साथ ज्ञान रहेगा तो निश्चित कल्याणकारी बनेगा। अर्थात् पूजन की अष्टद्रव्य लेकर सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की पूजा करेंगे तो उन पर आस्था दृढ़ बनी रहेगी। पूजा श्रावक का मुख्य कर्तव्य है और पानी का छन्ना - अहिंसा धर्म का परिपालन करने के लिए है, क्योंकि अहिंसा ही जैनधर्म का मूल है। वह अहिंसा मात्र वचनों में नहीं वरन् आचरण में हो तभी वह हमारे कर्मों की निर्जरा में साधक बनेगी। इसलिए इन बहिनों को ऐसा पुरस्कार दिलवाया है कि इन्होंने जो ज्ञान का अर्जन किया है, वह ज्ञान श्रद्धा और चारित्र के साथ रहे ताकि वे अपने कर्त्तव्य को, धर्म को न भूलें तथा अपने लक्ष्य को प्राप्त करें। मेरी ऐसी भावना है। और पुरस्कार की यथार्थता समझने के बाद सभी पूज्य आर्यिका श्री की दूरदर्शिता और सूझबूझ पर हतप्रभ रह गए और वे बहिनें भी उस पुरस्कार को उपकरण बनाकर मोक्षमार्ग में आचरणात्मक दृढ़ता से आगे बढ़ गयीं और कई बहिनों ने महाव्रतों के रूप में चारित्र धारण किया तो कई बहिनों ने अणुव्रत रूप चारित्र धारण किया, कई बहिनें चारित्र धारण करने में तत्पर हैं। सभी बहिनों ने आस्था, आगम और आचरण को धारणकर अपना भविष्य उज्ज्वल बनाया।

धन्य हो पूज्य गुरु माँ आप और आपकी सूझबूझ जो पुरस्कार को उपकरण बनाकर आत्मोद्धार का पथ और पाथेय दिया, ऐसी परोपकारी माँ के चरण कमल में नंत-नंतशः वंदामि....।

19. तस्वीर से खिली तकदीर

बचपन से ही जिन्हें अपनी आस्था का अर्घ समर्पित किया है, मैंने उन पूज्य (आराध्य) आर्यिका श्री के प्रति क्या बोलूँ, क्या सुनाऊँ, क्या लिखूँ? जिनकी तस्वीर के माध्यम से मेरी तकदीर खिलती रही है तो मैं सोचती हूँ कि उनका सान्निध्य निश्चित ही मेरे जीवन को विकसित करने के साथ-साथ मुझे मंजिल तक अवश्य पहुँचायेगा। बात उस समय की है जब हम 7-8 वर्ष के थे, तब पूज्य आर्यिका श्री का वर्षायोग हमारे गृहनगर में हुआ था, उस समय से ही मेरे मम्मी-पापा ने अपना सारा जीवन पूज्य गुरु माँ के चरणों में समर्पित किया और उन्हीं के मार्गदर्शन में आत्मकल्याण के मार्ग पर आगे बढ़े थे। अर्थात् श्रावक के व्रतों को अंगीकार किया था और हम बच्चों को भी यही बताया गया था कि पूज्य माताजी ही हमारे परिवार की कुलगुरु हैं। प्रत्येक समय हमें गुरु माँ के बारे में ही बताते रहते थे। कालान्तर में जब हम दोनों बहिनें 17-18 वर्ष की उम्र में नगर से बाहर पढ़ाई करने जाने लगी हॉस्टल में रहना था तब मेरी माँ ने जाते समय दो वस्तुएँ विशेष रूप से दी थी। एक पानी का छन्ना और गुरु माँ की तस्वीर और कहा था कि बेटी जब कभी कोई विपत्ति आये तो बस इस तस्वीर के सामने खड़े होकर गुरु माँ को याद करना। विपत्ति तत्काल ही सम्पत्ति रूप बन जायेगी। हम लोगों को तो आस्था थी ही सो माँ की बात पर विश्वास करके श्रद्धा से तस्वीर को हृदय से लगा लिया और हॉस्टल चले गए। हॉस्टल में भोगों की सभी सुविधाएँ थी पर धर्म करने की बिल्कुल भी छूट नहीं थी। पहले दिन ही वार्डन ने मंदिर जाने के लिए मना कर दिया अब हम क्या करें, हमारा तो नियम था, मंदिर जाये बिना कुछ खाते-पीते नहीं थे, भगवान् के दर्शन बिना मन भी नहीं लग रहा था। तत्काल अपनी माँ की बात याद आयी और कमरे में जाकर

गुरु माँ की तस्वीर निकाली और गुरु माँ को याद किया, गुरु माँ का नाम लेते ही ऐसा चमत्कार हुआ कि वार्डन ने हमें रोज-रोज मंदिर जाने की छूट दे दी, हम इतने प्रसन्न हुए कि अब हमारा धर्म नहीं छूटेगा और पढ़ाई भी निर्विकल्प हो जायेगी तभी से हम एकलव्य की भाँति अपनी गुरु माँ की अर्चा, पूजा, भक्ति करती रही और उनके शुभाशीष से अपने कार्यों में सफलता का हर सोपान चढ़ती रही। उसी भक्ति का परिणाम है कि आज 17 वर्ष के बाद मुझे मेरी गुरु माँ मिल गयीं। विश्वास है कि मेरी मंजिल भी मुझे मिलेगी।

मेरी मंजिल का हर पथ तुम्हीं हो।
मेरी जिंदगी का हर रथ तुम्हीं हो॥
तुम्हीं सारथी हो तुम्ही इसको चलाना।
मुझे मेरा लक्ष्य बस तुम से ही पाना॥

इसी भावना से वंदामि .....।

20. फूले नहीं समाये थे

जब कूकनवाली में पहली बार पूज्य बड़ी माताजी के मुख से सुना था कि जीवकाण्ड पढ़ना है तो इतनी खुशी हुई थी कि फूले नहीं समाये थे। ऐसा लगता था कि कब पढ़ लें - कब पढ़ लें.....। लेकिन जीवकाण्ड ग्रन्थ की प्रति एक ही थी और पढ़ने वाले 7-8 सदस्य थे। उस समय हम ऐसा भी नहीं जानते थे कि कहीं से मँगवा लें या प्राप्ति स्थान वहाँ से देखकर बुलवा लें। न ही किसी से पूछा न किसी ने बताया। फिर हम लोगों ने अपना-अपना समय बाँधकर पढ़ना शुरू कर दिया। हमारी बड़ी माताजी ने भी पहली बार पढ़ा था फिर भी स्वयं पढ़कर हम सभी को पढ़ाती थीं। हम सभी अपने-अपने समय से पढ़ते थे। उसमें भी रातभर का समय सरला बहिन का होता था। दिन में एक-एक घंटे सभी पढ़ते थे और एक घण्टा बड़ी माताजी (आर्यिका विशालमती जी) पढ़ाती थी। लेकिन उस समय एक ग्रन्थ से जिन-जिनने पढ़ाई की थी वे सभी आज हजारों लोगों को भी एक साथ जीवकाण्ड पढ़ाने में सक्षम हैं और

जब अध्ययन पूरा हुआ परीक्षा हुई तो पेपर देखकर मुझे बुखार आ गया था। परन्तु उस समय का पढ़ा हुआ आज तक नहीं भूले हैं, सभी विषय याद हैं, उसका कारण मैं सोचती हूँ कि दुर्लभता से पढ़ने का यह प्रतिफल है। जब दुर्लभता से मिलता है तो उसका महत्त्व समझ में आता है। वो महत्त्व जीवन - पर्यन्त तक बना रहता है। इस प्रकार पूज्य आर्यिका श्री ने बोधि की दुर्लभता को बताते हुए यह प्रेरणास्पद प्रसंग सुनाकर हम सभी को स्वाध्याय करने के लिए प्रेरित किया।

21. अवसर मिला है तो उपयोग कर लो

पथरिया ग्राम में ब्र. बहिनों को पूज्य आर्यिका श्री ने ज्ञान-अर्जन का महत्त्व समझाते हुए बताया कि प्रारम्भिक अवस्था में तो सभी प्रकार के विकल्प छोड़कर मात्र स्वाध्याय करना चाहिए। भले ही कुछ समझ में न आये फिर भी एकाग्रता से श्रद्धापूर्वक अध्ययन कर लेना चाहिए। हम लोग जब शुरू-शुरू में आये थे तब कुचामनसिटी में पण्डितजी (विद्याकुमारजी सेठी) पढ़ाने आते थे। सुबह साढ़े चार से साढ़े नौ बजे तक और दोपहर में 1 से 5 बजे तक क्लास लगती थी। दस भक्ति और सहस्रनाम का अर्थ संस्कृत की व्याकरण के आधार से पढ़ाते थे, लगभग 4-5 महीने तक इसी प्रकार से पढ़ाया था। उसके बाद मारोठ नगर में भी 4-5 घंटे तक एक बैठक में स्वाध्याय करते थे, लगभग सात साल तक ऐसे ही स्वाध्याय किया है। उस समय हमें कोई काम नहीं था मात्र आहार और सामायिक के अलावा कुछ भी काम नहीं था। न किसी से बोलना, न किसी को देखना, न कुछ कहना, न पढ़ाना, न प्रवचन करना, मात्र पढ़ना ही पढ़ना था। उस समय बहुत अच्छा लगता था। उसी का प्रतिफल है कि आज मुझे थोड़ा कुछ आता है। यद्यपि समझ में कुछ भी नहीं आता था, फिर भी पढ़ते जाते थे और पढ़ते-पढ़ते बाद में सब समझ में आने लगा, अपने आचार्य श्री को देखो... कितना पढ़ते थे, रात में भी, दिन में भी 18-20 घंटे तक पढ़ाई करते रहते थे और आज भी आचार्य श्री को जब देखोगे तब कुछ न कुछ पढ़ते देखोगे या मंथन करते देखोगे तभी तो उनका जीवन मूलाचार, समयसार जैसा बन गया है।

अतः तुम लोग भी अवसर मिला है, तो उपयोग कर लो। अभी अपने

पास समय है, बुद्धि है, योग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव मिला है तो पढ़ाई करलो, अध्ययन कर लो, जितना ज्ञान का अर्जन होगा, उतनी ही परिणामों में निर्मलता आयेगी, विशुद्धि बढ़ेगी, चारित्र का निर्दोष पालन कर सकोगे। इतना बड़ा असिधारा व्रत बचपन में ले लिया है तो उसको सार्थक कर लो। पहले तो मनुष्य पर्याय ही दुर्लभ है, फिर उसमें बोधि प्राप्त करने के भाव बहुत दुर्लभ है, उसमें भी तुम लोगों के भाव उसे प्राप्त करने के हो गए हैं तो उसका उपयोग करके अपना कल्याण कर लो। यह सब संसार की क्रियायें, कार्य होते आये हैं, होते रहेंगे, होते रहते हैं, ये कभी समाप्त होने वाले नहीं हैं। हमें स्वयं ही उन्हें समाप्त करने का पुरुषार्थ करना होगा, तभी संसार समाप्त होगा। मेरी तो ऐसी सलाह है, फिर तुम जैसा उचित समझो, करो।

पूज्य आर्यिका श्री ने बात-बात में इतना सुंदर प्रेरणास्पद प्रसंग सुनाकर हमें अपने लक्ष्य के प्रति सजगता से जागरुक कर दिया और पथ के साथ पाथेय भी दिया। ऐसी पूज्य गुरु माँ को नमन-नमन-नमन।

22. विचलित न होऊँ

संदर्भ है बिजौलिया वर्षायोग का। जब पूज्य आर्यिका श्री विशालमती माताजी '' मूकमाटी महाकाव्य'' का अर्थ श्रावकों को समझा रहीं थी, उस समय पूज्य गुरु माँ (आर्यिका विज्ञानमती माताजी) भी साथ में मंच पर विराजमान थी। तभी कक्षा के बीच में ही मंच के पीछे खिड़की में (आर्यिका द्वय के ठीक बीच में) मोटा काला नाग आकर बैठ गया, पूज्य आर्यिका श्री तो विषय श्रावकों को समझाती रहीं और गुरु माँ ने नाग को देख लिया, उनके साथ-साथ श्रावक गण सामने से देख रहे थे, हम बहिनें भी पीछे से देख रहे थे, सभी को विकल्प भी हो रहा था लेकिन डर लग रहा था कि अभी थोड़ा कुछ शोर हुआ तो कहीं यह फुफकार न दे, बिल्कुल पास में बैठा है। लेकिन आर्यिका द्वय को कोई भी विकल्प नहीं, न डर लगा, न उठी और कक्षा पूरी होते-होते जिनवाणी के शब्द सुनते ही वह पता नहीं कहाँ चला गया? उसके जाते ही हम सभी का मन संतोष

को प्राप्त हुआ जब वह चला गया तब हम लोगों ने पूज्य गुरु माँ से पूछा जब साँप आपके बाजू में बैठा था, तब आप क्या सोच रही थी। बड़ी माताजी से कुछ पूछने का साहस नहीं हो पा रहा है परन्तु उस समय आपके क्या विचार आये थे? तब पूज्य आर्यिका श्री ने बताया कि मैं तो पूरे समय यही सोचती रही कि काश यह मेरे पास में गोद में आकर बैठता और मैं बिल्कुल भी न हिलती ऐसा क्षण आता। आचार्य शांतिसागरजी महाराज को याद किया, उनके तो गले से लिपट गया था, फिर भी वे हिले नहीं थे, ध्यान से नहीं उठे थे, बाहुबली भगवान् के चरणों में तो वामी बनाकर रहते थे फिर भी विचलित नहीं हुए थे। हम उनको अपना आदर्श मानते हैं। उनकी चर्चा करते हैं, कथा कहते हैं, सुनाते हैं तो उनके जैसी परिस्थिति आने पर उनके जैसा आचरण भी तो करें। तभी तो उनको अपना आराध्य मानने की सार्थकता है। सुनकर मैंने कहा-माताजी सच आपकी भावना बाहुबली जैसे बनने की है। इसलिए आप सोचती हैं कि मेरी गोद में साँप आये, बिच्छू, छिपकली चिपकें और मैं सामायिक करती रहूँ, बिल्कुल भी विचलित न होऊँ।

मैं तो बाहुबली भगवान् के चरणों में प्रार्थना करती हूँ कि मम रत्नत्रय प्रदातृ गुरु माँ की भावना और पुरुषार्थ अतिशीघ्र ही सफल हो और मुझे भी उनके जैसी दृढ़ता साहस मिले... इसी भावना से वंदामि।

23. दुर्लभता से तो मिला है

सन् 2001 में कुण्डलपुर पंचकल्याणक के पश्चात् पूज्य आचार्य श्री का शुभाशीष लेकर सम्मेदशिखरजी की यात्रा करने गए। प्रतिदिन 40-42 किलोमीटर का विहार करके कुण्डलपुर से सम्मेदशिखर पहुँचे थे। पूज्य आर्यिका श्री को बचपन से ही सम्मेदशिखरजी की वंदना करने की तीव्र भावना थी, कई बार पुरुषार्थ भी किया पर अदृश्य कर्म का ऐसा रोड़ा अटकता रहा कि 38 वर्ष की उम्र हो गयी पर तीर्थराज पर नहीं पहुँच पा रहे थे। आष्टा वर्षायोग से तो पूज्या माताजी ने नमक का और दूध से बनी चीजों का त्याग करके तीर्थयात्रा का

उपधान कर लिया। फिर भी दो वर्षों के बाद ऐसा निमित्त बन पाया... और जुलाई 2001 में शिखरजी पहुँच पाये लेकिन अभी भी असाता कर्म अपना असर दिखा रहा था परन्तु तीर्थवंदना की भावना प्रबल थी पुरुषार्थ शक्तिशाली रहा तो कर्म को नीचा होना ही पड़ा। हुआ ऐसा कि शिखरजी पहुँचते-पहुँचते आपको बहुत कमजोरी महसूस होने लगी। ऐसा लग रहा था कि मियादी बुखार (टायफाइड) अपना प्रभाव दिखा रहा है, फिर भी तीर्थवंदना का इतना उत्साह था कि किसी से कुछ कहा भी नहीं और न ही अपनी क्रियाओं से, चेहरे से किसी को अनुभूति होने दी। भोजन में अरुचि हो रही है, पेट फूल रहा है या पाचन नहीं हो रहा है। कुछ भी नहीं बताया और आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी को उपवास के संकल्प के साथ तीर्थाधिराज की प्रथम वंदनार्थ पर्वत पर चढ़ना शुरू कर दिया। चढ़ते समय तकलीफ हो रही थी फिर भी बस एक ही लगन लगी थी कि मुझे तो वंदना करना है। चढ़ते-चढ़ते हम बहिनों ने पूछा कि जब आप इतनी थकान महसूस कर रहीं हैं तो आज क्यों चढ़े? एक दो दिन बाद वंदना कर लेते तब बोली - अरे बड़ी दुर्लभता से तो मुझे यह क्षण मिला है, उसे भी यहाँ आकर छोड़ दूँ नहीं मैं तो पूरी वंदना करूँगी और आस्था, उत्साह के साथ पूरी वंदना कर ली। वंदना पूर्ण होने के पश्चात् जब हम लोगों ने पूछा कि माताजी आपको इतनी थकान क्यों हुई? चढ़ने में भी कठिनता लगी क्या कारण है? तब पूज्य माताजी बोली-मुझे 2-4 दिन से टायफाइड जैसा लग रहा है। लेकिन मैंने पहले इसलिए नहीं बताया कि अभी तुम लोग मुझे पर्वत पर नहीं आने देते, मना करते (यद्यपि मैं तुम सबकी इस समय मानने वाली नहीं थी फिर भी तुम लोगों को विकल्प होता) और मैं जिस क्षण का इंतजार बचपन से कर रही थी, वो मुझे इतनी दुर्लभता से मिला और उसे भी इस शरीर के कारण से छोड़ देती। यह शरीर तो वैसे भी नश्वर ही है इसका उपयोग सच्चे सुख प्राप्त करने के लिए कर लो तो अति उत्तम है।

सुनकर एक-दो मिनिट हम स्तब्ध रह गए फिर मुख से यही निकला कि धन्य हो माताजी आप और आपकी तीर्थवंदना के प्रति असीम भक्ति और

शरीर के प्रति निष्पृहता।

मेरे अंदर भी आपके जैसे तीर्थों के प्रति भक्ति सदैव बनी रहे।

इसी भावना से वंदामि....।

24. यह स्वाध्याय का फल है

प्रसंग है, आष्टा वर्षायोग का। हम दशलक्षण धर्म पूर्ण होने के बाद जब आष्टा में पूज्य माताजी के पास पहुँचे तो आर्यिका श्री का लेखन कार्य चल रहा था। तत्त्वार्थमञ्जूषा के प्रश्नोत्तर लिखे जा रहे थे, लिखने के पश्चात् माता जी ने पेन खुला रख दिया अर्थात् उसमें ढक्कन नहीं लगाया, उसी समय उनके पास रखा बाजौटा (शास्त्र रखने की चौकी) किसी कारण से हिल गया तो मैंने उन्हें कार्टून का टुकड़ा लगाने को दिया तो माताजी ने उसे लगाने से मना कर दिया - तब मैंने माताजी से पूछा - आप कार्टून के टुकड़े को क्यों नहीं लगा सकती हैं, ऐसे ही आपने पेन का ढक्कन भी क्यों नहीं लगाया? पूज्य आर्यिका श्री - अरे बहिन! कुछ नहीं ये तो मेरी बातें हैं, मेरा काम है तुम इसमें नहीं उलझो.....।

मैंने पुनः कहा नहीं माताजी! बताओ तो सही आपकी कोई भी बातें और कोई भी क्रिया बिना प्रयोजन के नहीं होती हैं, कहीं न कहीं उनमें कुछ विशेष सार भरा होता है। कृपया बताइये तो सही जब 2-3 बार विशेष आग्रह के साथ पूछा तो बोली- अभी एक दिन चिंतन करते करते विचार आया कि हम उठाकर पेन का ढक्कन लगा देते हैं, लेकिन ढक्कन के अंदर तो परिमार्जन होता ही नहीं है और हम साधु हैं तो मात्र आँखों से देखकर ही नहीं लगा सकते हैं, परिमार्जन करना भी आवश्यक है, अतः हमें ढककन नहीं लगाना चाहिए क्योंकि यह अशक्य भी नहीं है अर्थात् हम बिना ढक्कन लगाये भी पेन रख सकते हैं तो फिर क्यों यह पाप करें? पाप से बचने का ही प्रयास करें। और रही बात कार्टून के टुकड़े वाली तो बहिन वह टेका लगाने से दबता है, उसके बीच में पोला स्थान रहता है, जहाँ पर जीव भी हो सकते हैं, वहाँ हम मार्जन नहीं कर

सकते हैं तो इसका प्रयोग क्यों करें।

माताजी आप कागज भी तो पूरा खोलकर देखकर ही लगाती हैं।

हाँ बहिन कहीं पर तह बनाकर कागज रखा है तो उसके अंदर भी तो जीव हो सकते हैं इसलिए उसको खोलकर देखकर परिमार्जन करके लगाती हूँ। तुम लोगों को भी अहिंसा धर्म के पालने में इतना विवेक तो रखना ही चाहिए, ऐसा यह मेरा स्वयं का विचार है।

देखो माताजी मैंने कहा था कि आपकी कोई भी बातें, कोई भी क्रिया अप्रयोजनीय नहीं है, आज मुझे चरणानुयोग का आचरणात्मक रूप विषय मिला है। स्वाध्याय करने पर ही यह समझ पाते हैं। माताजी सच में मैं कितनी भाग्यशाली हूँ कि आज मुझे सूक्ष्मता से अहिंसा धर्म की जानकारी गुरु मुख से मिली, यह आपके समीचीन स्वाध्याय का फल है कि कहाँ-कहाँ योनि स्थान हैं, जीव उत्पन्न हो सकते हैं और उनको जानकर हम हिंसा से बच सकते हैं।

पूज्य माताजी आपके चरणों में वंदामि करते हुए यही आशीष चाहती हूँ कि मेरे जीवन में भी पूर्ण अहिंसा धर्म आये, अहिंसा धर्म की पूर्णता मुझे मिले।

25. अपूर्व - सजगता

उपमातीत व्यक्तित्व की धनी पूज्य गुरु माँ अपनी प्रत्येक क्रिया के प्रति सजग रहती हैं। चाहें वे क्रियायें लेखन की हो या पठन-पाठन की हो, मनन-चिंतन की हो, शयन-आसन या गमन की हो, उसमें आगमानुसार सुधार की बात मिले तो उसे सुधारने का पुरुषार्थ करती हैं। चाहे वह किसी से भी मिले अर्थात् साधु से मिले या श्रावक से या किसी त्यागी व्रती से मिले अथवा कोई छोटा बच्चा भी क्यों न बताए उसको अपनी चर्या में सम्मिलित करके अपने जीवन को सुधारने का अथक प्रयास करती हैं। उदाहरण के तौर पर देखें आप राजस्थानी हैं और राजस्थान के किसी-किसी स्थान पर हिन्दी शुद्ध नहीं लिखी जाती है, छोटी बड़ी मात्राओं का ध्यान नहीं रखा जाता है। जब मध्यप्रदेश में आपका प्रवास हुआ तब किसी ने आपका ध्यान इस तरफ आकर्षित करवाया तो आपने

स्लेट पट्टी पर शुद्ध लेखन करना शुरू कर दिया। एक-एक शब्द को 10-10 बार लिख-लिखकर किसी से भी पूछ-पूछकर शुद्ध किया और आपकी मेहनत रंग लाई आज आप हिन्दी का शुद्ध और स्पष्ट लेखन करती हैं। लेखन क्रिया देखकर आपको कोई राजस्थानी नहीं कह सकता है। इसी प्रकार एक ब्र. बहिन ने आगमिक गाथाओं को पढ़ने की विधि बताई तो उसी समय उसमें सुधार कर लिया और ऐसा सुधार किया कि पढ़ाते समय पढ़ने वालों की छोटी बड़ी मात्राओं की गड़बड़ी समूह में से भी पकड़ लेती हैं, पूज्य गुरु माँ का विचार है कि **यदि हमें गलती पता चल जाती है और हम नहीं सुधारते हैं तो हमें ज्ञानावरण कर्म का विशेष बंध होता है,** जब हमें पाप से बचाने वाले मिल गए तो फिर हम क्यों पाप करें? हम सभी को भी यही शिक्षा देती हैं कि तुम लोग भी सही-सही पढ़ा-लिखा करो, इससे ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम बढ़ता है। इसी प्रकार साधना के क्षेत्र में भी आपने अपनी साधना को निखारा है।

जैसे पूज्य गुरु माँ ने स्वयं ही प्रसंगवशात् सुनाया कि जब हम किशनगढ़ में चातुर्मास कर रहे थे तब एक श्राविका ने बताया था कि आर्यिका गुरुमती माताजी के संघ में आर्यिकाएँ अशुद्धि के दिनों में 3-3 उपवास करती हैं और एक कोने में बैठी रहती हैं। जब मैंने सुना तब से ही मैंने मन में यह धारणा बना ली थी कि मैं भी ऐसी साधना करूँगी और आचार्य श्री के दर्शन करते ही उनके शुभाशीष से मुझे वो साधना करने में सफलता मिली। ऐसी ही 1990 में जब हम पहली बार आर्यिका संघ से मिले (आर्यिका प्रशांतमती माताजी) और उन्हें सर्दी में चटाई, घास.. आदि के बिना ही मात्र पाटे पर ही रात्रि व्यतीत करते देखा तो ऐसा लगा कि ये भी मेरे जैसे ही आर्यिका हैं, फिर जब ये पौष मास की सर्दी को इतनी सहजता से सहन कर सकती हैं तो मैं क्यों नहीं सहन कर सकती हूँ, मैं भी कर सकती हूँ और उसी समय से चटाई, घास का त्याग पहले अभ्यास रूप में किया और आचार्य श्री से शुभाशीष लेकर संकल्प के साथ एक समय सीमा तक त्याग कर दिया। इस प्रकार छोटों से भी उनकी क्रियाओं को देखकर, सुनकर अपनी साधना को निखार लिया और आज भी कितनी भी कैसी भी विकट

परिस्थिति हो आपकी यह साधना ऊँचाइयों के शिखर को ही छूती जा रही है। फिर निरंतर साधना की पूर्णता को प्राप्त करने का समीचीन पुरुषार्थ अनवरत रूप से चल ही रहा है।

धन्य हो गुरु माँ आप और आपकी आत्मसाधना के प्रति तत्परता। भगवान् से प्रार्थना करती हूँ, मेरी गुरु माँ शीघ्रातिशीघ्र ही साधना के अंतिम शिखर को प्राप्त करें, और मैं भी उनकी अनुसरी बनूँ, इसी भावना से गुरु माँ के चरणाम्बुजों में वंदामि-वंदामि-वंदामि।

26. अदम्य साहस

प्रसंग है केसली प्रवास का। हुआ ऐसा कि एक दिन सायंकाल मंदिरजी में दर्शन करने गए आते समय पूज्य माताजी ने तिथि दर्पण देखा तो उसमें दो दशमी थी, उन्होंने मुझसे कहा देखो माताजी दो दशमी है तो मैंने भी सामान्य से देखा और कह दिया कि हाँ माताजी हो सकती है, दो तिथि क्योंकि अभी एक तिथि टूट गयी थी और हम लोग वैसी ही धारणा बनाकर आ गये। दूसरे दिन पूज्य माताजी का उपवास कर लिया और मंदिर के दर्शन भी नहीं कर सकी अर्थात् स्त्री पर्यायगत समस्या आ गयी। दो दशमी की धारणा बनी थी सो एकादशी को दशमी जानकर उपवास कर लिया और बारस को पारणा करके (मूंगफली व कच्चे केले से) तेरस को बारस जानकर उपवास कर लिया। हम सबकी भी यही धारणा थी कि आज बारस है सो एक पारणा करके चौदस का उपवास कर लेंगे क्योंकि पूज्य माताजी का अष्टमी, चतुर्दशी के उपवास का नियम है। सब कुछ सामान्य चल रहा था, दोपहर में पूज्य माताजी ने शुद्धि की और शुद्धि के पश्चात् जब श्रावकों को दर्शन हुए तब एक महिला ने आकर कल का (चौदस का) उपवास करने का आशीर्वाद माँगा तब मैंने उससे कहा कल का उपवास क्यों कर रही हो परसों चौदस का करना सुनकर वह बोली माताजी चौदस तो कल ही है। पूज्य माताजी- नहीं परसों गुरुवार की है। श्राविका - नहीं माताजी बुधवार को ही चौदस है तो एक दो श्रावकों से और पूछा तब सभी ने

कहा - हाँ! माताजी चौदस बुधवार को ही है। सुनकर हम सभी संघ वाले सन्न रह गए और पूज्य माताजी प्रसन्नता पूर्वक बोले मुझे कल भी उपवास करना है। मेरा नियम है चौदस का उपवास करने का। फिर भी हम लोगों ने कहा मंदिरजी का तिथि दर्पण एक बार और देखें जिसमें दो दसमी थी और ब्र. बहिनें मंदिर से तिथि दर्पण लेकर आयीं उसमें देखा दसमी तो दो ही थी पर वह तिथि दर्पण 2007-08 का था जबकि 2008-09 आ गया था। हम सभी को बहुत विकल्प हो रहा था कि एकादशी का उपवास पारणा में मूंगफली व केले लिए फिर तेरस का उपवास और अब चौदस का उपवास है, चार दिन हो जायेंगे लेकिन पूज्य माताजी बड़ी सहजता, सरलता से प्रसन्नता के साथ उपवास का कायोत्सर्ग कर रहीं थी। सभी ने कहा परिस्थिति में पानी की छूट है, आप पानी ले लेना, तो माताजी बोलीं-पानी की छूट बीमारी में है और अभी कोई बीमारी नहीं है तो मैं पानी क्यों लूँ? और उपवास की भक्तियाँ कर लीं। पूज्य माताजी की अचानक बनी परिस्थिति में भी अपने नियम की अडिगता सजगता देखकर मुझे इष्टोपदेश का वह प्रसंग याद आ गया कि जो मनुष्य बहुत भारी भार लेकर शीघ्र ही दो कोश जाता है तो क्या वह सामान्य समय में पृथ्वी तल पर एक कोश तक नहीं जा सकता। अवश्य ही जा सकता है। अथवा जो योद्धा संग्राम में कोटिभटों की संख्या में विद्यमान योद्धाओं के द्वारा मिलकर भी नहीं जीता जा सकता है, वह क्या एक सामान्य योद्धा से जीता जा सकता है, नहीं जीता जा सकता है। इसी प्रकार मेरी गुरु माँ तो हर पक्ष में, सप्ताह में सहज ही बेला, तेला, पाँच उपवास करती रहती हैं तो वे क्या परिस्थिति आने पर अपने नियम को निभाने के लिए बेला नहीं करती, निश्चित ही करती।

पूज्य माताजी का अदम्य साहस और साधना देखकर भगवान् से यही प्रार्थना करती हूँ कि मैं भी कभी भी, कैसी भी परिस्थिति आये विचलित नहीं होऊँ और अपने गंतव्य को प्राप्त करने में सफलता हासिल करूँ।

27. स्वाभिमानी वृत्ति

(पूज्य माताजी को) बचपन से ही माँ ने स्वाभिमानी वृत्ति सिखायी थी, कभी किसी के सामने हाथ मत फैलाना, अपने पास जो है, जितना है, उसी में संतुष्ट रहना, दीनवृत्ति नहीं अपनाना। माँ के दिए हुए संस्कारों को अपनाते हुए ही अपना आचरण करती थी। ससुराल जाने के बाद भी उसे अपना घर मानने के बाद भी (अपनी स्वाभिमानी वृत्ति को) कभी किसी से कुछ माँगा नहीं। ससुराल में ऐसा प्रसंग भी आ गया फिर भी कभी न तो याचना की और न ही कभी कोई वस्तु उठाकर ग्रहण की। यहाँ तक कि सासु माँ रोज-रोज बहू को भोजन परोस देती बहू भोजन करके उठ जाती और घर का सारा काम-काज करती रहती, कभी थकती नहीं और कभी थक भी जाती तो भी काम के लिए मना नहीं करती। लगभग दो माह तक इतना ही भोजन और काम की प्रक्रिया चलती रही तो एक दिन सासु माँ ने (अपने पति) उसके ससुर से कहा - लीला बहू मात्र दो रोटी खाती है और सारे दिन मेहनत वाले काम करती रहती है, समझ में नहीं आता कि यह और भोजन क्यों नहीं माँगती? क्यों नहीं खाती है। सुनकर ससुरजी बोले तुम परोसती नहीं होगी।

सासु जी : नहीं जी, मैं दो रोटी लगाती हूँ, थाली में फिर जिसको जितना चाहिए वो माँग लेती हैं, परन्तु यह तो हाथ धोकर उठ जाती है।

ससुरजी : अच्छा अब तुम ऐसा करना? उसे चार रोटी एक साथ परोसना और रोटी पूरी खाने के पहले दलिया, खिचड़ी... परोस देना।

सासु माँ : ठीक है मैं ऐसा ही करूँगी।

दूसरे दिन भोजन के समय सासु माँ ने वैसा ही किया, तब बहू ने पूरा भोजन कर लिया तो सासु जी को समझ में आया कि मेरी बहू दो महीने से भूखी ही रहती थी, परन्तु कभी माँगा नहीं, कभी उठाकर खाया नहीं। आज उनका दिल रो भी रहा था और प्रसन्न भी हो रहा था। रो इसलिए रहा था कि मेरे कारण से मेरी बहू भूखी रही वो भी एक-दो दिन नहीं 60-70 दिन तक और प्रसन्न

इसलिए हो रही थी कि कितना स्वाभिमान है मेरी बहू में, निश्चित ही भव्यात्मा है, यह उन्हें साधु की अयाचक वृत्ति याद आ रही थी। शायद मेरी बहू भी गृहस्थ में रहकर उसी वृत्ति को अपना रही हो। मानो भविष्य में साधु बनने की भावना कर रही हो।

जब हम लोगों ने यह प्रसंग पारिवारिक जनों से सुना तो ऐसा लगा कि धन्य है, यह भव्यात्मा जिसने बचपन से ही स्वाभिमानी बनने की भावना रखी। और धन्य है वह माँ जिसने अपने बच्चों को इतने सुंदर संस्कार दिए हैं और धन्य हैं वे बच्चे जो अपनी माँ द्वारा प्रदत्त संस्कारों से संस्कारित होकर उसकी सुरभि से तीनों कुलों (गुरुकुल, पितृकुल, मातृकुल) को महकाकर कीर्ति यश को प्राप्त कर रहे हैं।

हे पूज्यनीय माताजी! आप अपनी स्वाभिमानी वृत्ति को अयाचक वृत्ति रूप अपनाकर मोक्षमार्ग में बढ़कर आत्मकल्याण कर रही है, मुझे भी ऐसा शुभाशीष दो कि मेरे अंदर भी अपने कुल, धर्म, गुरु पद के प्रति स्वाभिमान बना रहे, गौरव बना रहे कभी गर्व नहीं आये और मैं भी आत्मोद्धार कर सकूँ।

इसी भावना से वंदामि.....।

28. नियम को बनाया यम

प्रसंग है रहली वर्षायोग का...। मैंने अपने जीवन में सबसे पहली बार साधु संघ को निकटता से देखा था, देखकर कैसा लगा था, उस अनुभूति को मैं शब्दों में नहीं लिख सकती हूँ। आर्यिका संघ (आर्यिका विशालमतीजी, विज्ञानमतीजी, विद्युतमतीजी) का चुंबकीय आकर्षण ऐसा हुआ कि चुंबक की भाँति उसी क्षण से मैं उनसे चिपक गयी। प्रतिदिन सुबह से शाम तक उनकी चर्या देखती, चर्चा सुनती बहुत अच्छा लगता था। संघस्थ ब्र. बहिनों को उनकी चर्या में सहयोग देते देखती, उनके अनुकूल आहार, सेवा, वैयावृत्ति आदि कार्य करते देखती तो मन में एक अलग ही अनुभूति होती थी। 8-15 दिन तक तो देखती रही, फिर एक दिन ऐसा लगा काश मैं भी इनकी परिचर्या में सहयोगी बनती।

और साहस बनाकर मैंने मझली माता जी (पूज्य आर्यिका श्री विज्ञानमती) के पास जाकर कहा कि - माताजी मुझसे भी वैयावृत्ति करवा लो तो माताजी ने मना कर दिया। जब मैंने 2-3 बार विनय के साथ निवेदन किया तो भी आपने मना कर दिया-माताजी के मना करते ही मेरा चेहरा फीका-सा पड़ गया तो माताजी बोली-बुरा मत मानो, मेरा नियम है जो जीवन में एक बार केशलोंच करने का नियम लेता है, उससे ही मैं वैयावृत्ति करवाती हूँ। तुम भी नियम ले लो और कर लो वैयावृत्ति सुनकर मैंने कहा- माताजी! यदि व्रत नहीं लिया और शादी हो गयी तो। पूज्य माताजी - शादी हो जाये तो भी एक बार केशलोंच जरूर करना, भले ही बाद में बाल बढ़ जायें।

मुझे वैयावृत्ति करने की बहुत ही इच्छा हो रही थी सो मैंने नियम ले लिया और वैयावृत्ति कर दी। आगे भी रोज-रोज वैयावृत्ति करती थी। जब दशलक्षण पर्व आया और तब अंतिम दिन मैंने पूज्य श्री विशालमती माताजी से ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया और आर्यिका त्रय का शुभाशीष ऐसा मिला कि 2-3 वर्ष में ही मेरा केशलोंच करने का नियम पूरा हो गया तथा 10 वर्ष के बाद 2001 में सम्मेदशिखरजी में पूज्य माताजी से लिया गया नियम उन्हीं की कृपा से उन्हीं के चरणों में यम रूप में अर्थात् मूलगुण रूप परिवर्तित हो गया। मैंने तो कभी कल्पना भी नहीं की थी कि प्रारम्भिक अवस्था में धर्म से जोड़ने रूप दिया गया नियम एक दिन मुझे धर्म के वास्तविक स्वरूप से परिचित करवा देगा। यह सब गुरु की कृपा है। गुरु की दूरदृष्टि है। सच है गुरु कृपा से संसार से मुक्ति भी प्राप्त हो सकती है।

29. तुम्हारे कपड़े रंगीन हैं

जब हम मोक्षमार्ग पर प्रथम कदम बढ़ा रहे थे प्रसंग उस समय का है। एक बार 2-3 ब्र. बहिनें पूज्य आर्यिका श्री की वैयावृत्ति कर रही थीं, उस समय हम 2-3 बहिनें समाज की आयीं और पूज्य माताजी से कहा हम भी आपकी वैयावृत्ति करेंगे तब माताजी ने मना कर दिया बोली - तुम्हारे कपड़े रंगीन हैं। मैं

सफेद कपड़े वालों से वैयावृत्ति करवाती हूँ। सुनकर हम लोगों ने सोचा वैयावृत्ति तो करना है क्या करें? वैयावृत्ति तो करेंगे इतने दिन के बाद माताजी के पास आये हैं और हमने संतोष दीदी से पूछकर उनके कपड़े पहन लिए। सफेद कपड़े पहनकर सिर ढककर आ गये और माताजी से कहा अब हमारे कपड़े रंगीन नहीं है, सफेद हैं, आप वैयावृत्ति करवालो। पूज्य माताजी ने अपने वचनानुसार वैयावृत्ति करवा ली तभी वैयावृत्ति करवाते समय संसार-शरीर-भोगों से विरक्ति रूप परिणाम वाली आगमोक्त बातें बताती रहीं - शरीर कैसा है, भोग कैसे हैं, संसार में सब क्षणभंगुर है, यहाँ कुछ भी शाश्वत रहने वाला नहीं है। सुख हो, दुःख हो सभी जाने वाला है। तुम लोगों को कभी ऐसी अनुभूति होती है क्या? नहीं होती है। अच्छा देखो अभी तुम रंगीन कपड़े पहनी थी, अभी सफेद पहन लिए, अभी थोड़ी देर बाद फिर रंगीन पहन लोगी, बस ऐसे ही चलता रहता है, बदलता रहता है। हमारे पास कुछ भी नहीं रहता है। दुर्लभता से मानव-पर्याय मिली है तो बहिनों धर्म कर लो यह धर्म ही साथ जायेगा और बारहभावनाओं के संदर्भ उदाहरणों सहित सुनाये। लगभग 3-4 दिन तक यही प्रक्रिया चलती रही और हमारा वैराग्य स्थायी बन गया अर्थात् हमारे भाव मोक्षमार्ग पर बढ़ने के हो गए अपने जीवन को माताजी जैसा बनाने के हो गए। जबरदस्ती करके पहनाए गए सफेद कपड़े स्थायी बन गए अर्थात् हमारा जीवन विषय भोग रूपी रंगीन दलदल से निकल कर स्वच्छता की ओर बढ़ गया।

श्लाघनीय है हमारी गुरु माँ और उनकी युक्तियाँ जो मुझ जैसे पामर को पुनीत पावन बना दिया। मोक्षमार्ग पर अंगुली पकड़कर चलाने वाली, पथ के साथ-साथ पाथेय देने वाली पूज्यनीय गुरु माँ के चरणों में वंदामि।

30. अनूठा-समर्पण

25 वें दीक्षा दिवस पर पूज्य आर्यिका श्री ने अद्भुत विस्मयकारी अनूठी अनुभूति सुनायी- जब मेरी दीक्षा हुई थी तो बहुत समय तक मुझे पता ही नहीं था कि मेरी दीक्षा किस तारीख में हुई है, जब गुरु महाराज (आचार्य कल्प विवेकसागर

जी) की समाधि हुई और 2-3 वर्ष में उनका स्मृति ग्रन्थ निकला तब मुझे पता चला कि 2 फरवरी 1985 में मेरी दीक्षा हुई है। मुझे तो बस बारस याद रहती थी। अब आजकल यह हो गया है कि तारीख से भी दीक्षा दिवस साल में एक बार मनाते हैं, मैं तो शुरू से ही प्रत्येक बारस को कुछ न कुछ अनुष्ठान करती हूँ। चाहे विहार हो या बीमार हो, कितनी भी कैसी भी परिस्थिति आ जाये पर अनुष्ठान करते ही हैं। इस प्रकार ऐसा करके साल में 24 बार दीक्षा दिवस मना लेते हैं। बाह्य में साल में एक बार मना लेते हैं। वैसे भी पूज्य आर्यिका श्री ने दीक्षा लेते ही रोज तत्त्वार्थसूत्र के पाठ का नियम लिया था और प्रतिवर्ष कुछ न कुछ विशेष नियम लेते रहते हैं। (जैसे इस बार भी पूज्य गुरु माँ ने नियम लिया है कि 5 वर्ष तक आषाढ़ माह से फाल्गुन माह तक अष्टमी-चतुर्दशी का उपवास करूँगी, कभी परिस्थिति आ गयी तो जल ले सकती हूँ) किसी वर्ष में 1000 घंटे का मौन लिया था, कभी आवश्यक के अलावा भी सामायिक करूँगी। इस प्रकार अनेकानेक साधनाएँ दीक्षा दिवस को निमित्त बनाकर करती रहती हैं। वैसे मैं सोचती हूँ कि दीक्षा दिवस को तो हर-क्षण, हर समय मनाना चाहिए, जिस क्षण में दीक्षा ली थी, उस क्षण को याद करते रहना चाहिए कि जब मैंने दीक्षा ली थी उस समय मेरे परिणाम कैसे थे, कितनी विशुद्धि थी, क्या भावनाएँ थी, कैसी-कैसी साधना करने के भाव बनाये थे और अब क्या कर रही हूँ और उस समय को याद रखोगे तो कभी भी अपनी आत्मा को, अपने व्रतों को नहीं भूलोगे और लक्ष्य के प्रति बढ़ते जाओगे।

पूज्य गुरु माँ की अनुभूति सुनकर ऐसा लगा कि धन्य हो माताजी आपकी दीक्षा लेने की उग्र भावना और महाव्रतों को धारण करते समय की विशुद्धि को, गुरु के प्रति समर्पण को जो आपको अपनी दीक्षा की तारीख भी याद नहीं रही, याद रहा मात्र अपना लक्ष्य, अपना व्रत, गुरु के वचन।

पूज्य माँ श्री आपके श्री चरणों में मेरी यही भावना है कि मेरे अंदर भी अपने व्रतों के प्रति ऐसा ही उत्साह बना रहे।

इसी भावना से आपको नमन-नमन-नमन।

31. मैं मात्र आर्यिका हूँ, आर्यिका

प्रसंग है भव्य आर्यिका दीक्षा समारोह का। 15 अप्रैल 2009 को दोपहर में मंगलाचरण, दीपप्रज्ज्वलन के साथ कार्यक्रम शुरू हुआ कार्यक्रम के बीच में ही ब्र. अनिल भैया (अधिष्ठाता, उदासीन आश्रम, इंदौर), ब्र. संजीव भैया (सिद्धायतन, सागर) आदि 50-60 त्यागी व्रतियों व दिगम्बर जैन पंचायत अशोकनगर के साथ-साथ गुना, आरोन, मालथौन, घुवारा, तेंदूखेड़ा, मुंगावली, शाढ़ौरा आदि अनेक समाजों के वरिष्ठ गणमान्य पदाधिकारियों ने मिलकर पूज्य आर्यिका श्री को गणिनी, रत्न, विदुषी आदि पद देने की घोषणा की। घोषणा सुनते ही समस्त जनसमुदाय ने तालियों की गड़गड़ाहट और जय-जयकार के नारों से समर्थन किया। सभी बहुत प्रसन्न थे, लेकिन पूज्य आर्यिका श्री सामान्य सहज सौम्य मुद्रा के साथ यथावत् विराजमान थीं, न चेहरे पर प्रसन्नता थी, न ही विषादता थी। सभी लोग जय-जयकार करते हुए गुरु माँ की स्वीकृति का बेसब्री से इंतजार करने लगे। और 5-7 मिनिट पश्चात् जब पूज्य आर्यिका श्री का उद्बोधन प्रारम्भ हुआ तब सर्वप्रथम यही कहा कि आप सभी ने मिलकर मुझे उपाधियाँ देना चाहीं हैं, उन सभी उपाधियों को तुम अपने-अपने पास सुरक्षित रखना, जब कभी मुझे आवश्यकता पड़ेगी मैं ले लूँगी। पहले भी दो बार- प्रथम नसीराबाद जैन समाज ने 1998 में, दूसरी बार 2001 में पाँच आर्यिका दीक्षा समारोह (सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र में) के अवसर पर उपरोक्त उपाधियाँ देनी चाही थीं, तब भी मैंने उन लोगों से यही कहा था जो तुमसे कहा है। वो भी अपने पास सुरक्षित रखे हैं, तुम लोग भी सुरक्षित रख लो।

दूसरी बात यह है कि मैं तुम लोगों की बात मानकर इन पदों को ग्रहण कर भी लूँ तो फिर दूँगी किसको, क्योंकि पद उपाधि है और उपाधि मतलब परिग्रह है और परिग्रह छोड़े बिना समाधि नहीं होती है, मुझे आत्मकल्याण करना है। सो मैं इन आपद रूप पदों को ग्रहण करना नहीं चाहती हूँ।

तीसरी बात और सुन लो अब तुम लोग मिलकर बार-बार ऐसा प्रयास नहीं करना मैं आज इस सभा में सभी के बीच यह संकल्प करती हूँ कि न मुझे

गणिनी बनना है, न रत्न, न विदुषी, न प्रज्ञाश्रमणी। मैं तो मात्र आर्यिका हूँ, आर्यिका ही रहूँगी, यह भी व्यवहार से निश्चय से तो मैं शुद्ध आत्मा हूँ। न आर्यिका हूँ, न मेरा मुख है, न नाक है, न कान है, न हाथ है, न पैर है, न साड़ी है, न पिच्छी है, न कमण्डलु है, मैं तो सिर्फ आत्मा हूँ आत्मा।

इस प्रकार जब उन्होंने जनसमुदाय के बीच यह घोषणा की तो सभी विस्मित से रह गये और बहुमुखी प्रतिभा की धनी निष्पृह साधिका, अध्यात्मरसिका के चरणों में नतमस्तक होकर उनके अनूठे संकल्प की सराहना गुरु के जय जयकार और तालियों की गड़गड़ाहट के साथ की और पूज्य आर्यिका श्री के चरण सान्निध्य को पाकर अपने भाग्य को भी सराहने लगे। कई लोग कहने लगे धन्य हैं, ऐसे साधक जो हमें आज भी चतुर्थ काल की याद दिलाते हैं, किसी ने कहा भले ही पंचमकाल में साधना कर रही हैं माँ, लेकिन परिणामों की विशुद्धि और निर्मलता तो चौथेकाल जैसी है। सच है ऐसे ही साधक अपना रिजर्वेशन करवा लेते हैं मोक्षमार्ग रूपी गाड़ी का और गाड़ी आते ही बैठकर मंजिल पा लेते हैं।

हम सभी भी अपने आपको भाग्यशाली मानते हुए सोच रहे थे कि निश्चित ही हमने पूर्व में कुछ ऐसा विशेष सत्कर्म किया है, उसी का प्रतिफल है कि पूज्य आर्यिका श्री जैसी गुरु माँ की वरदानी छाँव में रहने का और हर क्षण आत्मकल्याण करने का सुनहरा अवसर मिलता है। भगवान् से यही प्रार्थना करती हूँ कि भगवन्! जब तक आप जैसे न बन जायें, तब तक मुझे ऐसे ही निष्पृह साधक रूप निर्ग्रन्थ गुरु की चरण-शरण मिले..... इसी भावना से चरणारविन्द में नमन-नमन-नमन।

32. असाता बदली साता में

सागर से पूज्य मुनि श्री पूज्यसागरजी, विमलसागरजी, सौम्यसागरजी महाराज के दर्शन करके (अशोकनगर में सुमतिसागरजी महाराज की सल्लेखना चल रही थी) समाधिस्थ साधु सुमतिसागर जी महाराज के दर्शनार्थ विहार कर

रहे थे लेकिन रजवाँस ग्राम में ही उनकी समाधि के समाचार मिल गए सो संघ बरौदिया ग्राम में ही रुक गया। प्रसंग इसी बरौदिया ग्राम में प्रवासकाल का है।

त्रयोदशी को आहार के पश्चात् पूज्य आर्यिका श्री ने चतुर्दशी का उपवास ले लिया लेकिन त्रयोदशी की रात से ही पूज्य माताजी को उल्टियाँ शुरू हो गयीं और सुबह होते-होते दस्त भी शुरू हो गए। पूरे दिन उल्टी दस्त होने के बाद भी उपवास सहजता से अपनी चिर-परिचित शांत-सौम्य मुद्रा के साथ कर लिया। दूसरे दिन पारणा में घी का त्याग कर दिया। जब सभी ने पूछा तो बोली मेरा बहुत समय से संकल्प था कि फाल्गुन की पूर्णिमा को घी का त्याग करूँगी। सो कितनी भी कैसी भी परिस्थिति आती संकल्प तो मैं निभाती ही निभाती। पारणा में आहार तो ठीक हो गये लेकिन उल्टी-दस्त बंद नहीं हुए और इसी समय स्त्रियोचित कर्म का ऐसा थपेड़ा लगा कि माताजी की अशुद्धि हो गयी सो कोई भी प्रकार की वैयावृत्ति नहीं करवायी क्योंकि तीन दिनों में वैयावृत्ति करवाने का त्याग है। दूसरे दिन आहार में मात्र कच्चा केला और पानी ही लिया लेकिन फिर भी उल्टी-दस्त बंद नहीं हुए, असहनीय वेदना होने पर भी आहार में कोई औषधि नहीं ली, न ही कोई बाह्य उपचार करवाया। यहाँ तक कि जी घबराने पर भी कुछ सूँघा नहीं। हम लोगों ने बहुत मनाया, बहुत निवेदन किया, फिर भी कुछ नहीं करवाया मात्र अपने नियम को ध्यान में रखा। नियम में यद्यपि विशेष परिस्थिति की छूट है, परन्तु पूज्य माताजी की धारणा है कि सामान्य से तो नियम निभ ही जाता है, निभा लेते हैं। परिस्थितियों में ही तो परीक्षा है, अभी तो प्रश्न हल करना है सो अपने प्रश्न का उत्तर समता से देती रहीं। परीक्षा में पास होना है, फैल नहीं। पास होकर कर्म की निर्जरा करना है। यही तो सुनहरा अवसर है, अपने परिणामों को संभालने का और उनमें समता परिणाम रखकर कर्म निर्जरा करके लक्ष्य को प्राप्त करने का। और इसी समय पुरुषार्थ करना भूल गए या कर्म के प्रवाह में बह गए तो फिर मोक्ष की बातें करना थोथा साबित होगा। पूज्य आर्यिका श्री की स्थिति देखकर हम सभी विकल हो रहे थे पर गुरु माँ अपने नियम का दृढ़ता से भेदविज्ञान के साथ पालन करके प्रसन्नता पूर्वक शांत परिणामों

से वेदना को सहन करती रहीं। दूसरी तरफ गुरु माँ की बचपन से ही ऐसी धारणा है कि कोई भी बीमारी हो तीन दिन में अपने आप ठीक हो जाती है। सो यह भी तीन दिन में ठीक हो जायेगी। (जब तीन दिन में ठीक नहीं होगी तब उपचार के बारे में सोचूँगी।) और उनकी धारणा ने काम किया-बीमारी तीन दिन पूरे होते-होते सायंकाल से ही ठीक होने लगी, चौथे दिन तो स्वास्थ्य पूर्ण ठीक हो गया आखिर समता-परिणाम के आगे असाता कर्म को साता में परिवर्तित होकर आना ही पड़ा।

हम सभी प्रत्यक्ष असहनीय वेदना को शांति से सहते देख रहे थे और वेदना देखकर सभी की आँखों में आँसू भी आ रहे थे, लेकिन वेदना में समता नियम की दृढ़ता और कर्म निर्जरा का पुरुषार्थ देखकर विस्मित से सुस्मित थे।

आखिरकार सभी पूज्य आर्यिका श्री की दृढ़ता और लक्ष्य की प्राप्ति के पुरुषार्थ को देखकर नम्रनीत हो गए। पूज्य आर्यिका श्री के चरणों में प्रणाम करते हुए यही प्रार्थना है कि मैं भी अपने लक्ष्य को प्राप्त करूँ, इसी भावना से वंदामि...।

33. कंचन दीदी की सीख

प्रसंग है पूज्य आर्यिका श्री के घर से निकलकर मोक्षमार्ग में आने का..।

जब परम पूज्य आचार्य कल्प श्री विवेकसागरजी महाराज का भीण्डर वर्षायोग के बाद विहार हो रहा था तब लीला बहिन को ऐसा लग रहा था कि मैं अब कैसे घर से निकल पाऊँगी, ऐसा विचार करते-करते ब्र. कंचन दीदी के पास रोना आ गया। उस समय दीदी ने कहा था कि यदि तुम्हें घर से निकलना है तो घर में या बाहर कभी बड़ों को जबाव मत देना और अपनी युक्ति लगाकर निकलना यदि बड़ों की बात सुनकर चलोगे और अपनी युक्तियाँ लगाओगे तो निश्चित ही घर से निकलने में समर्थ हो जाओगी तथा अपने लक्ष्य को भी प्राप्त कर लोगी। आत्मा का कल्याण भी हो जायेगा एवं आपसी प्रेम भी बना रहेगा।

दीदी की इसी सीख/ शिक्षा को मानकर उसी को आधार बनाकर ही मैंने कार्य किया तो मैं घर से भी निकलकर आ गयी और आर्यिका भी बन गयी और सभी कुछ ठीक हो गया। अतः बढ़ते रहो कभी भी, कहीं पर भी असफलता नहीं मिलेगी।

34. आप सच में गोबर गणेश सी हैं

किसी प्रसंगवशात् हम सभी को पूज्य आर्यिका श्री ने प्रसंग सुनाया कि पूज्य आर्यिका श्री विशालमती माताजी की समाधि के पश्चात् जब हम नसीराबाद गए, तब चार महीने तक कोई हमारे पास नहीं आता था मात्र प्रवचन सुन लेते, आहार करवा देते, आहारोपरांत धर्मशाला में छोड़ जाते बस। वहीं पर एक श्रावक ने किसी संदर्भ पर (पूज्य आर्यिका श्री के प्रवचन सुनकर) कहा कि माताजी अब तो आप बहुत विद्वान् हो गयी हो, आपको बोलना भी आ गया है, तब पूज्य आर्यिका श्री - आपको मेरे में क्या विद्वत्ता दिख गयी है, श्रावक - पहले तो आप कभी बोलते ही नहीं थे, गोबर गणेश सी थीं, अब तो आपको बहुत कुछ आने लगा है।

उस समय उस श्रावक की बात गलत नहीं थी क्योंकि पहले 6-7 वर्ष तक (पूज्य आर्यिका श्री) मैं किसी भी गृहस्थ से नहीं बोलती थी, मात्र अध्ययन ही करती रहती थी और इसमें एक कारण अस्वस्थता भी थी तो दूसरा कारण बड़ों के बीच में नहीं बोलना चाहिए। इस नीति पर अक्षरशः चलना चाह रही थी और मेरी धारणा बनी थी कि यदि कल्याण करना है तो छोटों को बड़ों के सामने कभी नहीं बोलना चाहिए।

शाहपुर वर्षायोग से जब पूज्य बड़ी माताजी (विशालमती माताजी) का स्वास्थ्य खराब हो गया था तब पूज्य आचार्य श्री का आशीर्वाद आया कि छोटी वाली से कहो कि वह प्रवचन करे, कक्षा आदि लगावे, तभी से मैंने बोलना शुरू किया है सो आज तक चल रहा है।

पूरा प्रसंग जब मैंने पूज्य आर्यिका श्री के मुखारविन्द से सुना तो मैंने

सोचा कि पूज्य आर्यिका श्री के बारे में उस श्रावक ने सच ही कहा था कि आप '' गोबर गणेश सी थीं'' क्योंकि गो का अर्थ है- वाणी, वर का अर्थ है - श्रेष्ठ, गण का अर्थ है-समूह और ईश का अर्थ है-स्वामी अर्थात् जो श्रेष्ठ वाणी के समूह का स्वामी हो, वो ही तो होता है... गोबर गणेश... और सच है आज पूज्य माताजी का चिंतन-प्रवचन या पठन-पाठन सुनो तो यह बात सार्थक लगती है।

मैं भगवान् से यही प्रार्थना करती हूँ कि अभी पूज्य माताजी के ज्ञान का क्षयोपशम इतना प्रकृष्ट है, लेकिन उन्हें शीघ्रातिशीघ्र भवान्तर में क्षायिक ज्ञान प्राप्त हो..(और वे दिव्यध्वनि के मालिक बनें)और उनके साथ-साथ हमारा भी ज्ञानावरण कर्म क्षय को प्राप्त हो, इसी भावना से पूज्य माताजी को वंदामि....।

35. सभी देखते रह गए

प्रसंग है कल्पद्रुम महामण्डल विधान आरोन के समापन समारोह का । समाज के सभी लोगों की भावना थी कि विधान के समापन समारोह के समय श्री जी की गजरथ पर शोभायात्रा नगर - परिक्रमा के रूप में हो और विधानाचार्य ने भी सभी की भावनाओं को ध्यान रखते हुए पूज्य आर्यिका श्री से शुभाशीष भी ले लिया। लेकिन नगर-परिक्रमा हेतु रथ 14 फुट का आया और नगर का मुख्यमार्ग 15 फुट का था अब क्या किया जाये गजरथ मुख्य मार्गों से नगर परिक्रमा हेतु कैसे निकालें? विधानाचार्य, समाज के पंच और मुख्यकार्यकर्ता सभी विकल हो रहे थे। सभी जगह समाचार हो गए हैं और आस-पास की जनता भी नगर परिक्रमा में सम्मिलित होने हेतु आ रही है किन्तु गजरथ कैसे निकालें..... तभी किसी ने कहा अपन श्री जी की शोभायात्रा विमान में निकाल लें और गजरथ से पाण्डाल की परिक्रमा कर लें, किसी ने कहा गजरथ रहने दो, अपन तो वृषभरथ तैयार कर लें, कोई कहने लगा अश्वरथ तैयार कर लें.... इस प्रकार सभी अपने-अपने विकल्प बता रहे थे, तभी विधानाचार्य ने कहा - चलो अपन सभी पूज्य माताजी के पास चलते हैं, माताजी जैसा कहेंगी वैसा कर लेंगे। यह बात सुनते ही युवावर्ग जो चार माह से पूज्य माताजी के चरण सान्निध्य में

बैठकर धर्म की महिमा सुन रहा था, समझ रहा था, धर्म का प्रभाव देख रहे थे सो वे बोले आदरणीय पण्डितजी और अध्यक्षजी आप यहाँ-वहाँ के विकल्प मत करो पूज्य माताजी से आशीर्वाद ले लो 15 फुट के मार्ग से 14 फुट का रथ सरलता से निकल जायेगा। हमें पूज्य माताजी के शुभाशीष पर पूर्ण विश्वास है कि जो कार्यक्रम सुनिश्चित है, वही अच्छे से सम्पन्न होगा। वे सभी अपनी श्रद्धा समर्पण के साथ विधानाचार्य को लेकर पूज्य माताजी के पास आये और सारी चर्चा बतायी सुनकर सहजता से ही पूज्य माताजी ने कहा कि घबराओ मत णमोकार मंत्र पढ़कर अपनी भावनाओं को निर्मल बनाते हुए गजरथ की फेरी (परिक्रमा) शुरू करना, सभी कार्य सहज हो जायेंगे और आशीष का हाथ ऊपर उठा दिया। पूज्य माताजी का शुभाशीष लेकर सभी ने णमोकारमंत्र पढ़ा और अरनाथ भगवान् की पूज्य आचार्य श्री और पूज्य माताजी की जय-जयकार करते हुए गजरथ की नगर-परिक्रमा शुरू कर दी। लगभग 3-4 घंटे तक नगर के मुख्य मार्गों से होते हुए गजरथ अपने ही बराबर चौड़ी सड़क पर सहजता से चलते-चलते पाण्डाल में पहुँच गया। नगर परिक्रमा को विधानाचार्य के साथ-साथ सारी जनता देखती रह गयी और पूज्य माताजी के आशीष से दुष्कर कार्य भी सहज होते सभी देखते रह गए। पूज्य माताजी की तपस्या और णमोकार मंत्र पर अगाढ़ श्रद्धा का प्रतिफल तो था ही यह लेकिन उसके साथ-साथ युवा वर्ग और समाज की पूज्य आर्यिका श्री के प्रति समर्पण श्रद्धा का भी फल था, उन्होंने जो धर्म का स्वरूप समझा था और उस पर श्रद्धा की थी तदनुरूप कार्य करके धर्म की प्रभावना भी की थी।

धन्य हो माताजी आप और आपकी णमोकार मंत्र पर अगाढ़ आस्था को। यही आस्था तो एक दिन आपको सिद्धत्व पद प्राप्त करायेगी। हम सभी की भी सच्चे देव-शास्त्र-गुरु पर पंच परमेष्ठी पर ऐसी ही अगाढ़ श्रद्धा हो और हम भी आपके जैसे बनें, इसी भावना से पूज्य आर्यिका श्री के चरणारविन्द में कोटि-कोटिशः वंदामि.....।

36. दिन रहते-रहते ही भोजन परोसना

प्रसंग है आरोन वर्षायोग के समापन समारोह पर आयोजित कल्पद्रुम महामण्डल विधान के अंतिम पड़ाव का....।

विधान के अंतिम दिन प्रीतिभोज का आयोजन किया था। प्रातःकाल पूजन समाप्त होते-होते और श्री जी की गजरथ नगर परिक्रमा प्रारम्भ होते समय 2-3 हजार लोगों के आने की संभावना थी, सो कार्यकर्ताओं ने उसी अनुपात में भोजन तैयार करवा लिया, लेकिन नगर-परिक्रमा पूर्ण होते-होते तो 8-10 हजार की जनता पाण्डाल में दिख रही थी। सभी चातक बने स्वाति नक्षत्र की बूँद स्वरूप पूज्य आर्यिका श्री के अमृत वचन सुनने के उत्सुक थे। पाण्डाल में बैठे-बैठे अमृत वाणी की वर्षा से अपने आपको शीतल करना चाह रहे थे। सायंकालीन भोजन की व्यवस्था भी थी सो भी सभी निश्चिंत बैठे थे, परन्तु जनता को देखकर भोजनशाला के व्यवस्थापक घबरा रहे थे, अब क्या करें? हमारे यहाँ से श्रावक भूखे जायेंगे, एक घण्टे में हम 5 हजार लोगों की भोजन व्यवस्था भी नहीं कर सकते, क्या करें, क्या न करें और घबराते-घबराते दौड़ते हुए मेरे पास आये... पूज्य माताजी संघ सहित मंच पर विराजमान थीं, अतः वे पीछे से ही आकर कहने लगे कि माताजी ऐसी-ऐसी परिस्थिति आ गयी है, अब क्या करें? भोजनशाला शुरू होने वाली है लेकिन जनता अधिक है और भोजन कम है। सभी को संतुष्ट कैसे करें? तब मैंने कहा - आगे जाकर पूज्य माताजी से आशीर्वाद ले लो और जैसा वो कहें वैसा करना। सभी साहस जुटाकर हाथ जोड़कर पूज्य माताजी के सामने पहुँचे और निवेदन किया। तब सुनकर पूज्य माताजी ने कहा कि यह बात तो सही है कि हमारे यहाँ से कोई श्रावक भूखा नहीं जाना चाहिए लेकिन तुम यह भी सोचो कि भगवान् के समवसरण में कोई असंतुष्ट होता है क्या? सो तुम लोग घबरा रहे हो, णमोकार मंत्र पढ़कर भोजनशाला शुरू करना और सभी को उदार दिल से दिन रहते-रहते परोसना कोई भी भूखा नहीं जायेगा। ऐसा कहते कहते शुभाशीष का हाथ उठा दिया। सभी ने आशीर्वाद

लेकर णमोकार मंत्र पढ़कर पूज्य आर्यिका श्री के कथनानुसार ही दिन रहते-रहते सभी को भोजन करवाया। उस 2-3 हजार लोगों के भोजन में से ही 8 हजार लोगों ने भोजन कर लिया और संतुष्टि पूर्वक भोजन की सराहना करते-करते अपने घर लौटे तथा भोजन के पश्चात् एक कढ़ाई भरकर बेसनिया बच भी गया जो कि समाज के प्रत्येक घर में प्रसाद के रूप में बाँटा गया।

इस प्रकार पूज्य आर्यिका श्री के शुभाशीष से बड़े-बड़े असंभव कार्य भी चुटकी बजाते ही सानंद सम्पन्न हो जाते हैं। यह पूज्य माँ श्री की त्याग, तपस्या और णमोकार मंत्र पर असीम आस्था का प्रभाव है।

37. तीन तो क्या तीस लाख आ गए

प्रसंग आरोन नगर का ही है। वर्षायोग के समापन पर समाज के सभी आबालवृद्ध का मन बड़ा विधान करवाने का हो रहा था, पूज्य माताजी से पूछा तो उन्होंने कह दिया कि विधानाचार्य से सम्पर्क करो। इस विधि अनेकानेक प्रकार के सोच-विचार-चर्चा के उपरांत कल्पद्रुम महामण्डल विधान कराने का निश्चय किया लेकिन जब विधानाचार्य ने विधान में होने वाला खर्च कम से कम 3 लाख रुपये बताया तो कार्यकर्तागण थोड़ा सोचने को मजबूर से हो गए फिर उन्होंने सोचा चलो चंदा करते हैं, तीन दिन में चंदा करते-करते एक लाख रुपये ही एकत्रित हो पाये अब तो कल्पद्रुम मण्डल विधान और कठिन-सा लगने लगा, सभी बड़े चिंतित से होकर चिंता-चिंता में ही पूज्य गुरु माँ के पास आये और सच भी है, जब हमसे कुछ समाधान नहीं निकल पाता है तो गुरु के पास ही जाकर समाधान खोजना समझदारी का काम है। सो वे अपनी चिंता लेकर पूज्य आर्यिका श्री के चरणों में आकर शीतल छाँव में बैठकर शांति की अनुभूति करने लगे.. थोड़ी देर मौन बैठे रहे फिर पूज्य माताजी से बोले - माताजी समझ में नहीं आ रहा है, क्या करें? आप ही हमें मार्ग दिखाओ, हम कैसे इतने बड़े विधान का आयोजन करें। उन सबकी बातें सुनकर और चेहरे देखकर पूज्य आर्यिका श्री को हँसी आ गयी और बोली तुम लोग वर्षों से अरनाथ भगवान् के दर्शन कर रहे हो,

उनकी पूजा कर रहे हो, चरणों में रहते हो, भक्ति कर रहे हो, फिर भी इतनी छोटी-छोटी बातों में परेशान हो जाते हो, इसका मतलब तुम लोगों को अरनाथ भगवान् पर श्रद्धा नहीं है। सुनकर सभी बोले - नहीं माताजी हमें भगवान् पर तो पूर्ण श्रद्धा है। पूज्य आर्यिका श्री - जब श्रद्धा है तो इतना क्यों घबराते हो? अरे श्रद्धा में 'तो' मत लगाओ और पूर्ण श्रद्धा के साथ कार्य करो। जिन भगवान् का नाम लेते ही अनेक भवों के संचित कर्म क्षण भर में नष्ट हो जाते हैं तो यह इतनी सी परेशानी दूर नहीं होगी क्या? अरे परेशानी आयी ही नहीं है, पर ये तो तुम लोग हो जो पहले से परेशान हो रहे हो। उन जिनेन्द्र भगवान् का नाम लेकर कार्यक्रम सुनिश्चित कर लो 3 तो क्या 30 लाख भी सहजता से आ जायेंगे। पूज्य आर्यिका श्री का आशीर्वाद मिलते ही सभी ने प्रसन्न होकर भगवान् का और गुरु का जय-जयकार किया और श्रद्धा के साथ पूज्य माताजी के चरण सान्निध्य में ही कार्यक्रम सुनिश्चित कर लिया और एक निश्चित समय पर मुख्य पात्रों की बोलियाँ शुरू हुईं और चक्रवर्ती की बोली ही जब 3 लाख से भी ऊपर चली गयी तथा देखते-देखते ही 10-15 लाख की बोली चार पाँच पात्रों में ही हो गयी और सबसे बड़ा आश्चर्य तो यह हुआ कि बोली लेने वाला अपना नाम बाद में लिखवाता पहले रुपये जमा कर रहा था और कल्पद्रुम मण्डल विधान शुरू होकर समापन होते-होते तो 30 लाख रुपये कोषाध्यक्ष के पास नगद राशि के रूप में जमा हो गए।

यहाँ पर बात पैसे की नहीं है, पैसा तो क्या है हाथ का मैल है, जड़ है, पुद्गल है, इससे हमें क्या प्रयोजन है। प्रयोजनभूत बात तो यह है कि पूज्य माताजी की वीतराग भगवान् के प्रति असीम भक्ति, श्रद्धा का परिणाम और उनकी भाषा समिति पालने का फल कि भगवान् पर आस्था रखकर कह दिया तो वो होता ही है। दिगम्बर श्रमण/संत के मुख से निकले वचन वर्गणाओं के सदुपयोग में ही निकलता है या तो बोलते नहीं हैं और बोलते हैं तो हित-मित-प्रिय आगम अनुसार ही बोलते हैं और जो कह देते हैं, वह करते ही हैं, कथनी करनी समान रखने के कारण ही वचन सिद्धि उनके पास होती है और हमारी

पूज्य गुरु माँ भी ऐसे ही श्रमणी हैं, इसलिए उनके मुख से जो निकला वह होता ही है और फिर उनकी भगवान् के प्रति भक्ति और अपनी भक्ति पर दृढ़ता से विश्वास और जब भक्त को भगवान् पर इतना विश्वास रहता है तब उसका संसार-सागर भी सूख जाता है, फिर तुच्छ सा लौकिक कार्य हो जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं है।

कार्यक्रम के बाद सभी पूज्य गुरु माँ और उनकी भगवद् भक्ति को सराहते ही रह गए और उनके चरणों में यही प्रार्थना करने लगे कि हे माँ आपके जैसी श्रद्धा भक्ति हमारी भी हो और हम भगवान् की भक्ति करके संसार से पार हो जायें.....।

इसी भावना से आपके श्री चरणों में कोटि-कोटिशः प्रणाम..... प्रणाम.... प्रणाम।

38. मितव्ययता और सदुपयोग

दूसरी बार आर्यिका दीक्षा समारोह के अवसर पर अशोकनगर में जिनवाणी की सुरक्षा के संदर्भ में अपने बचपन की प्रेरणास्पद और विस्मयकारी घटना पूज्य आर्यिका श्री के मुखारविन्द से सुनी - जब मैं 6 वीं- 7 वीं कक्षा में पढ़ती थी, तब आधी कीमत में पुस्तकें खरीदते थे और साल भर पढ़कर पौन कीमत में वापस बेचते थे, इतनी व्यवस्थित करके सुरक्षित रखते थे और उसमें से इतना पढ़ लेते थे कि पास होकर अगली कक्षा में पहुँच जायें। इस प्रकार से सुरक्षित रखना चाहिए जिनवाणी को। तुम लोग यह मत सोचो कि सब पढ़ते हैं सो फट जाती हैं, अरे पढ़ने से कभी पुस्तकें नहीं फटती हैं। पुस्तक फटती हैं, पढ़ने के बाद यद्वा-तद्वा रखने से, पटक देने से और यह भी मत सोचो कि हम तो रोज-रोज जमाते हैं, लेकिन सब लोग यहाँ वहाँ रखकर चले जाते हैं, तो विचार करो कि घर में माँ एक ही होती है और सारे घर को व्यवस्थित रखती है, बच्चे पूरे दिन सामान यत्र-तत्र बिखेरते रहते हैं और माँ संभालती रहती है।

इसलिए तुम लोग भी जिनवाणी की सुरक्षा किया करो, जितनी जिनवाणी

की रक्षा करोगे, व्यवस्थित करोगे, बहुमान रखोगे तो तुम्हारे ही ज्ञान का क्षयोपशम बढ़ेगा। जितना क्षयोपशम अध्ययन/स्वाध्याय करने से नहीं बढ़ता, उतना जिनवाणी के प्रति बहुमान रखने, उसकी सुरक्षा करने से, व्यवस्थित रखने से बढ़ेगा। अतः हम सभी को देव-शास्त्र-गुरु के प्रति विनय परिणाम रखना चाहिए और यथायोग्य सम्हाल भी करनी चाहिए।

इस प्रकार पूज्य आर्यिका श्री से प्रेरणास्पद संदर्भ सुनकर सभी ने जिनवाणी का जीर्णोद्धार करने का नियम लिया।

39. सुनहरी-गर्मी

प्रसंग है जेठ महीने का, ग्रीष्मऋतु का जब सूर्य आग उगलता हुआ आकाश में प्रातःकाल से ही अपना रंग दिखाता है और शाम को 7 बजे तक अपना प्रखर प्रताप पूरे वातावरण में एकमेक करके ही अस्ताचल में छिपता है, इसी समय में पूज्य आर्यिका श्री गुना से विहार करके शाढ़ौरा ग्राम में पहुँचे। जिनालय के दर्शन करके श्रावकों ने निर्माणाधीन संत भवन में ठहराया। प्रातःकाल का समय था सो श्रावकों को उस समय उस स्थान पर गर्मी का अनुभव नहीं हुआ लेकिन जब दोपहर में सूर्य ने प्रचण्ड रूप दिखाया और गरम-गरम हवा ने उसका पूरा साथ निभाया अर्थात् हॉल चारों तरफ से खुला था, सो लू-लपटों के थपेड़े पूरे दिन चारों तरफ से आते थे। श्रावकगण तो आहारोपरांत चले गए और शाम को साढ़े चार बजे तक आए। पूरी दोपहर गर्मी के साथ निकल रही थी, सामायिक के बाद आर्यिकाओं ने ब्र. बहिनों ने पूज्य आर्यिका श्री से कहा कि माताजी पुरानी धर्मशाला में चलो, वहाँ पर थोड़ी ठण्डक है, कमरा भी है तो इतनी लू नहीं लगेगी किन्तु माताजी ने कहा, नहीं मैं तो यहीं रहूँगी, तुम लोग वहाँ चले जाओ, कुछ लोग वहाँ चले गए लेकिन पूज्य माताजी वहीं गर्मी को अध्यात्म की ठण्डक को साथ लेकर सहन करते हुए बैठी रहीं। दो तीन दिन बाद जब हम लोगों ने पुरानी धर्मशाला में चलने की जिद की अपनी शारीरिक हानि बतायी तब बोली मेरा तो नियम है विशेष परिस्थिति को छोड़कर के जब तक

शाढ़ौरा में रहूँगी यहीं बैठूँगी, सुनकर सभी स्तब्ध रह गए कुछ भी नहीं कह पाए। और सभी पूज्य आर्यिका श्री की साधना के अवसर ढूँढ़ना और प्रतिकूलता मिलाकर भी उसमें समता रखकर कर्मों की निर्जरा करने के अदम्य साहस को देखकर धन्य-धन्य कह उठे और नतमस्तक होकर प्रणाम करके ऐतिहासिक महापुरुषों की साधना को स्मृत करके सातिशय पुण्यार्जन करने लगे। शाढ़ौरा में तीक्ष्ण गर्मी को सहज-सरल सौम्य मौसम की भाँति अपनी साधना करके 8-10 दिन बाद विहार किया और विहार करते-करते थूवौनजी अतिशय क्षेत्र की वंदना करके (ऐतिहासिक नगरी चंदेरी में भी) ग्रीष्म की भीषण तपन में ही प्रातःकाल 10-11 किलोमीटर चलकर लगभग 9 बजे अतिशयकारी चौबीसी के दर्शनार्थ चंदेरी नगर में पहुँचे। गर्मी के कारण हम सभी आर्यिकाओं की स्थिति त्रस्त सी हो गयी थी, सभी को पानी की तड़फन लग रही थी और हम लोगों ने तो पानी में पैर डाल दिए गीली नैपकिन की पट्टी लगा ली, पानी से मुँह, हाथ धो लिया, अर्थात् सभी प्रकार के शीतल उपचार कर लिए, लेकिन पूज्य आर्यिका श्री ने कोई भी किसी भी प्रकार की वैय्यावृत्ति नहीं करवायी, शांति से उस वेदना को सहन करते रहे, स्वयं की वेदना को भी सहते रहे और हम सभी की वैय्यावृत्ति भी करवाते रहे। आहारचर्या पर निकले तो हम सभी को आस-पास के चौके छोड़कर कड़कती धूप में सबसे दूर वाले (1 किलोमीटर दूर) चौके में आहार करने गए। आहार शुरू होते ही पानी की कमी होने से बार-बार उबाकी आने लगी फिर भी वहाँ न हवा करने दी न गीली नैपकिन से मुँह पौंछने दिया और सहज ही आहार करके आ गयी, दूसरे दिन चतुर्दशी होने से उपवास का संकल्प कर लिया, हम सभी कहते रहे कि माताजी जल उपवास कर लेना, बहुत गर्मी है, पर माताजी ने कुछ भी नहीं सुनी और उपवास की भक्तियाँ कर लीं।

अगले दिन चतुर्दशी को भी गर्मी की प्रचण्डता से सारे दिन तकलीफ होती रही परन्तु पूज्य माताजी चौबीसी मंदिर में ही ध्यान अध्ययन करती रहीं, कुछ भी सेवा, वैय्यावृत्ति करवाना तो दूर थोड़ी देर के लिए कमर भी सीधी नहीं कि अर्थात् विश्राम भी नहीं किया, हम सभी ने सोचा सायंकाल ठण्डक हो

जायेगी तो थोड़ा चैन मिलेगा लेकिन सायंकाल भी गरम हवा ही चलती रही और तो और रात को भी छत पर जाकर नहीं सो पाये क्योंकि धर्मशाला में कुछ कार्यक्रम था सो नीचे आँगन में ही चारों तरफ की बिजली की गर्मी वाले स्थान पर विश्राम किया। हम लोग खाये पिये थे तो भी गर्मी के कारण नींद नहीं आ रही थी फिर जिनका उपवास था उन्हें नींद कैसे आती फिर भी पूज्य माताजी ने किसी भी प्रकार का उपचार वैयावृत्ति नहीं करवायी और न ही अपने स्थान से हिली डुली, क्योंकि उनको पता था कि मैं थोड़ी सी हिली नहीं कि अभी सभी लोग यहाँ-वहाँ होयेंगे, चारों तरफ फिरेंगे और उससे कितना आरम्भ होगा, हिंसा होगी मेरे निमित्त से? अहिंसा महाव्रत का पालन करने के लिए पूरी रात उसी पाटे पर अंदर-बाहर की तपन को महापुरुषों को याद करके, गुरु का चिंतन करके सहन करती रहीं। माला फेरती रहीं। प्रातःकाल जब हम लोगों ने पूछा माताजी आपको कैसा लग रहा है, रात को बहुत तकलीफ हो रही थी, तब बोलीं, क्या है, कुछ नहीं, वो रात भी गयी और यह क्षण भी जाने वाला है, स्थायी कुछ भी नहीं है। संसार में सब जाने वाला ही है, स्थायी कुछ भी नहीं है, न यह गर्मी, न सर्दी, न वर्षा इसलिए इन सबमें हर्ष-विषाद नहीं करना चाहिए, तभी मोक्षमार्ग पर चलना सार्थक है।

प्रातःकाल पारणा में भी कुछ नहीं लिया, फिर भी अपने आवश्यक समय पर और यथावत् समय तक किए। इतनी भीषण गर्मी में भी कठिन तपश्चरण को वैराग्य और अध्यात्म को देखकर सभी श्रावक जय-जयकार कर उठे तथा ऐसी ही गर्मी में फिर चंदेरी से विहार करके 11 किलोमीटर चलकर गोधन नामक ग्राम में आहार किया पूज्य आर्यिका श्री का आहार प्रारम्भ होते ही प्रथम अञ्जली पानी में अंतराय हो गया, सब देखने वाले आहार देने वाले अवाक् से रह गए क्योंकि गर्मी में इतना चलकर आये और यहाँ आकर बैठने के लिए भी कोई छायादार स्थान नहीं, चारों तरफ से गर्मी-गर्मी ही गर्मी, तपन ही तपन फिर भी पूज्य आर्यिका श्री की शांत, सौम्य मुद्रा हमेशा की भाँति मुस्कराती रहीं और अपने कार्यों में संलग्न रहीं, हम सभी पूरे दिन यहाँ वहाँ ठण्डा स्थान

ढूँढ़ते रहे पर माताजी अपने स्थान पर ही बैठी रहीं, सायंकाल को बामौरकलॉ की तरफ विहार कर दिया ऊपर से सूर्य तप रहा है, नीचे से धरती तप रही और बीच में शरीर भी तप रहा था किन्तु पूज्य गुरु माँ अपने लक्ष्य की तरफ निर्विकल्प शांत रूप से विहार करती रहीं। 5-6 किलोमीटर चलकर रास्ते में रात्रि-विश्राम करके प्रातःकाल बामौरकलां पहुँचे। आहार हुआ पारणा में मात्र आम व मूँगफली ही ली। दूसरे दिन भी मात्र यही आहार लिया गर्मी के आसमान से लम्बे-लम्बे दिन इतना सा आहार कर कैसे निकले, वो भी एक दिन नहीं, दो-तीन दिन हो गए, फिर भी चेहरा सहजता, सरलता शांति के तेज से चमकता रहा चेहरा देखकर तो ऐसा लग रहा था कि अच्छा पेट भरकर षट्रस मिश्रित आहार किया हो। उसके बाद भी सप्तमी को जब आहार पर निकले तो आहार शुरू होते ही अंतराय आ गया, दूसरे दिन अष्टमी थी सो उपवास कर लिया। उधर गर्मी कम ही नहीं हो रही थी तो इधर पूज्य माँ श्री अपने संकल्पों से विचलित नहीं हो रही थी। हम सभी भगवान् से प्रार्थना कर रहे थे कि भगवान् बारिश आ जाये तब कुछ बादल तो हुए लेकिन बारिश नहीं हुई। बारिश तो दूर रही ठण्डी हवा भी नहीं चली। पूज्य गुरु माँ ने उपवास कर लिया सो तो ठीक वैय्यावृत्ति भी नहीं करवायी। बहिनों ने कहा कि पूज्य माताजी पैरों में मलाई तो लगवा लीजिए तो बोली। नहीं मलाई लगवाने से पैर ठण्डे हो जाते हैं और नींद आ जाती है इसलिए नहीं लगवाना है, क्योंकि फिर नींद आ जायेगी तो सो जायेंगे और नींद नहीं आयेगी तो भगवान् का नाम लेंगे कुछ चिंतन मनन होगा। सुनकर सभी आश्चर्यचकित हो उनको देखते रहे, ज्येष्ठ मास की गर्मी और 5 दिन से बिना भोजन पानी के भी कैसी समता और शांति से अपने आवश्यकों में तल्लीन है। ऐसा अनुभव हो रहा था कि भेदज्ञान की चर्चा तो हमने बहुत बार सुनी थी, पर आज चर्या के रूप में भी देख लिया। ऐसी तपस्या उन वृषभसेन, धर्मघोष मुनिवर्यों की याद दिला रही थी, उन आतापन योग वाले साधकों की साधना आँखों के सामने अपना चित्र बनाने लगी थी जो शास्त्रों में पढ़ी थी, गुरु मुख से सुनी थी, सच में पूज्य आर्यिका श्री को यदि पर्यायगत बंधन न हो तो वे भी उन मुनिराजों के समान ही ध्यान

साधना करतीं।

मैं तो वीर-प्रभु से यही प्रार्थना करती हूँ कि हे वीर भगवान्! मम् गुरु माँ की ध्यान-साधना, आत्मिक बल दिन दूना रात चौगुना वृद्धिंगत होता रहे और उनकी कर्म रूपी क्यारी सूखकर जीर्ण-शीर्ण हो जाये तथा आत्मा रूपी क्यारी हष्ट-पुष्ट होकर शुद्धात्मा रूप में परिणत हो जाये और हम भी उनके समान साधना करके उनका ध्यान करके अपने साध्य को प्राप्त करें। इसी भावना से पूज्य आर्यिका श्री के निर्मल कुन्दनवत् चरण युगल में नमन, नमन, नमन।

40. गुरु दर्शनोपरांत ही मिलेगा यात्रा को विराम

सम्मेदशिखर में 2001 के वर्षायोग के पश्चात् उत्तरभारत के अनेकानेक तीर्थक्षेत्रों की यात्रा सानंद सम्पन्न होने पर भी पूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के दर्शन, मुनिवृन्द की वंदना करके ही इस यात्रा को विराम देंगे, ऐसी भावना लेकर नेमावर सिद्धोदय सिद्ध क्षेत्र की ओर विहार चल रहा था। (पूज्य गुरुवर संघ सहित वहीं पर विराजमान थे) वैशाख जेठ का माह था, पूज्य आर्यिका श्री संघ सहित विदिशा से भोपाल की तरफ जा रहे थे, इस मौसम में जहाँ कहीं कड़ी धूप पड़ रही थी, जोर-जोर से लूयें चल रही थी, धरती अग्नि समान जल रही थी। राहगीरों के पैरों में छाले पड़ जाते थे। घड़ों-घड़ों पानी पीने पर भी प्यास के मारे सभी व्याकुल हो रहे थे, ऐसी परिस्थिति में भी 11 किलोमीटर चलकर लगभग 8-9 बजे भोपाल शहर पहुँचे। पहले दिन का अंतराय होने पर भी पूज्य आर्यिका श्री ने उपवास कर लिया। उपवास करना तो ठीक है, उस पर भी इतनी धूप चढ़ने पर भी 10 बजे केशलोंच भी कर लिया। ऐसी गर्मी में जहाँ शरीर पसीने से तर-वतर था। मन ठण्डी हवा में बैठकर विश्राम करने को कह रहा था, उस समय भी पूज्य माताजी ने केशलोंच करना शुरू कर दिया था। यद्यपि केशलोंच का समय पूरा नहीं हुआ था, लगभग एक माह बाकी था, फिर भी अपने व्रतों का पालन की अतीव भावना और गर्मी में बिहार करके भी विशेष साधना करने की भावना होने से उन्होंने केशलोंच कर लिया। केशलोंच करते समय मुख पर तनिक भी खेद नहीं आया न ही ललाट पर

विषाद की रेखाएँ आयी और क्लांति को तो कहीं कोई स्थान ही नहीं मिला। दिन में भी जब कभी शरीर ने अपना जीर्ण-शीर्ण रंग दिखाना शुरू किया तो पूज्य गुरु माँ ने तत्काल ही सुकुमाल, सुकौशल आदि परीषह-विजयी मुनियों की। सीता, चंदना, अंजना आदि सतियों, आर्यिकाओं की त्याग, तपस्या, चर्या को स्मृत करके अपनी आत्मा को पुष्ट कर लिया। परम धैर्य का, शौर्य का, अध्यात्म का अवलम्बन लेकर विषाद, दुःख को बहुत दूर भगा दिया, जिससे उनके चेहरे पर प्रतिकूलता में भी अनुकूलता जैसी प्रसन्नता झलकती रही।

10 बजे जब गुरु माँ ने केशलोंच करना शुरू किया था तब ऐसा लग रहा था कि भीषण गर्मी का पहाड़ सा दिखने वाला यह दिन कैसे निकलेगा? खाने-पीने के बाद भी हमारी स्थिति इतनी विकल हो रही है, फिर इन्होंने तो कल भी नहीं खाया पिया और आज भी नहीं खाया पिया है। लेकिन पूज्य आर्यिका श्री की आत्मिक तत्त्व चर्चा, पठन-पाठन, बारह भावनाओं का चिंतन सुनकर गुरुओं के अध्यात्म-सरोवर से स्पर्शित साधना, आराधना की स्मृति स्वरूप शीतल छाँव में दिन कब निकल गया, संध्या कब हो गई पता ही नहीं चला। रात्रि में भी किसी को कोई पीड़ा न देते हुए णमोकार मंत्र की माला जपते-जपते ध्यान करती रहीं। सभी पारणा का इंतजार कर रहे थे। आहारचर्या हुई लेकिन बीच में ही उल्टी हो गयी। फिर पानी नहीं पिया। इतना सब होने पर भी 4 बजे के लगभग नेमावर में विराजमान गुरु के दर्शनार्थ विहार कर दिया। इतनी विषम परिस्थितियों में भी गुरु दर्शन की अभिलाषी पूज्य आर्यिका श्री की अपूर्व विस्मयकारी साधना देखकर मुख से यही स्वर निकलते हैं कि हे माँ सदा-सदा जयवंतो। इस धरा पर ताकि हम आपके धैर्य, गांभीर्य, शौर्य और साधना से कुछ सीख सकें। प्रतिकूलता में ही रत्नत्रय के प्रति अनोखी आत्मीयता लगन देखकर सभी ने भगवान् से यही प्रार्थना की कि हे भगवान्! पूज्य गुरु माँ की साधना हमेशा-हमेशा वृद्धिंगत होते-होते एक दिन अपने साध्य को प्राप्त करें। और हम भी कभी ऐसी साधना करें। इसी भावना से गुरु माँ के चरणयुगल में वंदामि।

41. मैं साधु हूँ

प्रसंग है खनियाधाना का। जहाँ आचार्य गुरुवर विद्यासागरजी महाराज के 39 वें दीक्षा दिवस का कार्यक्रम था। पूज्य आर्यिका श्री ने तो उपवास कर लिया लेकिन हम सभी भी कुछ करना चाह रहे थे, किसी ने रस परित्याग किया, किसी ने ऊनोदर तप किया और भी सभी संघस्थ सदस्यों ने अपनी-अपनी यथाशक्ति नियमों को लिया। मैं भी पूज्य गुरु माँ से उपवास करने की जिद कर रही थी, लेकिन मेरा स्वास्थ्य अनुकूल न होने के कारण उपवास तो क्या ऊनोदर आदि भी नहीं मिला, तब मैंने कहा के मुझे कोई भी नियम आज के दिन जरूर दो, उस समय पूज्य आर्यिका श्री ने एक दो मिनिट मौन रहने के बाद कहा कि अच्छा तुम रोज एक माला फेरना किसकी या कौन से मंत्र की तो ''मैं साधु हूँ, मैं आर्यिका हूँ।'' नियम सुनकर मुझे थोड़ा अटपटा सा लगा तो पूज्य गुरु माँ ने पूछा क्यों पसंद नहीं आया? मैंने कहा - माताजी पसंद तो आया परन्तु भाव समझ में नहीं आया है।

पू. आर्यिका श्री - अच्छा सुनो ''मैं साधु हूँ, मैं आर्यिका हूँ'' इसका भाव यह है कि हम यदि हर समय याद रखेंगे कि मैं आर्यिका हूँ तो कभी अनर्गल प्रवृत्ति नहीं करेंगे। यद्वा-तद्वा आचरण नहीं होगा। जब कभी भी कोई भी पद के विपरीत प्रवृत्ति होने लगे तो तत्काल सोचो मैं साधु हूँ क्या यह मेरे पद के योग्य है। क्या ऐसा कार्य करने से, खाने से, बोलने से, कहने से, सोने से, चलने से, बैठने से मेरे आर्यिका के व्रतों में अतिचार लग रहा है उससे मेरी ही हानि होगी और उस समय याद आ गया कि मैं आर्यिका हूँ मेरे गुरु इतने महान् हैं। मैं महावीर भगवान् के कुल का हूँ, अपने गुरुवर सदैव आदर्शपूर्ण आचरण करते है सहिष्णु हैं फिर हम ऐसा कैसे कर सकते हैं? तो तुम कभी गलत प्रवृत्ति नहीं कर पाओंगे, करते-करते भी याद आ गया तो भी तत्काल उससे दूर हो जाओगे। मेरे भाव तो यही हैं। इसलिए इस मंत्र की माला फेरना। भाव सुनकर मेरे साथ-साथ सभी संघ वालों को बहुत अच्छा लगा और ऐसा लगा कि

सबसे अच्छा और अध्यात्म अमृत रस से भरा कलश रूप नियम मुझे मिला है, सभी संघस्थ सदस्यों ने भी यह नियम सहर्ष स्वीकार कर लिया। पुनः पू. आर्यिका श्री ने कहा इससे सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि कभी भी साधर्मी से विसंवाद नहीं होगा। तू-तू, मैं-मैं नहीं होगी। कभी रोना आ जाए या कभी किसी ने कुछ कह दिया या किसी के ऊपर गुस्सा आ जाये...आदि अनेकानेक प्रसंग आयेंगे, उन सभी प्रसंगों पर हमारे व्रतों में दोष नहीं लगेगा और संक्लेश परिणाम नहीं होंगे, संक्लेश नहीं होगा तो आर्त्त-रौद्र ध्यान नहीं होगा, आर्त्त-रौद्र ध्यान से बचोगे तो धर्मध्यान सहज ही हो जायेगा। इसलिए याद रखो कि मैं आर्यिका हूँ।

नियम सुनकर भाव समझकर सभी ने एक साथ यही कहा कि पू. आर्यिका श्री धन्य हैं, आप और आपका चिंतन जो आत्मकल्याण के लिए इतना सुन्दर सूत्र हमें दिया है, इसके आधार से हम अपने पद, व्रत और गुरु का गौरव बनाये रखने में समर्थ हो सकेंगे और अपने मार्ग को प्रशस्त करके लक्ष्य प्राप्ति का पुरुषार्थ भी पूर्ण कर पायें इसी भावना से चरणारविंद में कोटिशः नमन....।

42. 108 वंदना पूर्ण होंगी तब...

पू. आर्यिका श्री के 25 वें दीक्षा दिवस पर ब्र. विनीता ने सुनाया कि हमारी गुरु माँ के मुखारविंद से अनायास जो निकल जाता है वो होकर ही रहता है। जब पू. माताजी का वर्षायोग तीर्थराज सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र पर हुआ था। उस समय एक दिन मैंने पू. माताजी से कहा कि मैंने पार्श्वनाथ भगवान् के सामने व्रत लिया है मुझे अब घर से निकलना है, आपका सानिध्य भी मिल गया है और मेरी पूर्ण दृढ़ता भी है परंतु मैं घर से निकल नहीं पा रही हूँ। सुनकर पूज्या माताजी ने कहा क्यों नहीं निकल पा रही हो- तब मैंने कहा मेरे पारिवारिक जन जाने नहीं दे रहे हैं। इस बार मैं आपके साथ जरूर चलूँगी ...सुनते ही माताजी बोली जब तुम्हारी पर्वतराज की **108 वंदना** पूर्ण होंगी

तभी तुम घर से निकल पाओगी। उस समय मैंने उस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया लेकिन जब पू. माताजी का बिहार हुआ तब मैंने बहुत पुरुषार्थ किया फिर भी मैं नहीं निकल पायी। 2-3 वर्ष के बाद जब मुझे मालथौन में पू. माताजी के दर्शन हुए तो उस समय मेरा स्वास्थ्य खराब हो गया, फिर मैं माताजी के साथ नहीं रह पायी उसके 8-10 माह बाद जब मेरी शिखरजी की 108 वंदना पूर्ण हुई तब यकायक ही ऐसा निमित्त मिला कि (दक्षिण यात्रा के समय) मैं पू. माताजी के चरणों में करमाला वर्षायोग (महाराष्ट्र) में क्षेत्र की अति दूरी होने पर भी पहुँच गयी। जैसे ही मैंने पू. माताजी को वंदामि किया चरण छुए और पू. माताजी ने यही पूछा कि 108 वंदना पूरी हो गयी। तब मैंने कहा हाँ माताजी आपके शुभाशीष से वंदना पूर्ण होते ही आपके पास आने को मिला है। तभी मुझे 2001 वर्षायोग के शब्द याद आ गए कि जब 108 वंदना पूरी होंगी तभी निकल पाओगी। आज भी अनेकानेक प्रसंगों में ऐसा अनुभव होता है कि गुरु माँ के मुख से जो निकल जाए वो होकर ही रहता है। हम आगे पीछे कितना भी प्रयास करें लेकिन वो हो नहीं सकता है। मुझे भी पू. आर्यिका श्री के वचनानुसार वंदना पूर्ण होते ही मोक्षमार्ग पर आगे बढ़ने का सहारा मिल गया गुरु माँ की छाँव मिल गयी तभी से मेरी धारणा है कि गुरु के वचनों को ध्यान से सुनकर तदनुसार ही आचरण करना चाहिए, इसी से हमारा कल्याण होगा।

धन्य हैं हमारी गुरु माँ जिनको वचन सिद्धि है और उसका मात्र एक ही कारण है कि उनकी कथनी करनी में साम्यता है। मेरे अंदर भी इतना साहस और संबल आये कि मैं भी दीक्षा ले सकूँ और मार्ग को पूर्ण तय करके मंजिल को पा सकूँ। इसी भावना से पू. आर्यिका श्री के चरणों में सादर वंदामि।

43. परीक्षा में हुए पास

संदर्भ है रक्षाबंधन विधान महोत्सव नगर तेंदूखेड़ा का। उपसर्ग सहन करने वाले 700 मुनिराजों की पूजन भक्ति और अध्यात्म रस से सरावोर होकर सभी श्रावक सानंद पूर्वक कर रहे थे। पूजन सुनकर हम सभी के अंदर भी

भक्ति आध्यात्म की गंगा प्रवाहित होकर संक्लेश रूपी कालिमा को धो रही थी अर्थात् सभी की विशुद्धि बढ़ रही थी, परिणामों में निर्मलता आ रही थी, सभी का मन त्याग तपस्या करने का हो रहा। पूज्य आर्यिकाश्री के भाव भी उपवास पारणा करने के हो रहे थे, लेकिन अंतराय आ जाने से स्वास्थ्य नरम-गरम हो रहा था, फिर भी उनका मन कह रहा था कि उपवास कर लूँ। लेकिन सभी संघ वाले अनुनय-विनय करके मना करने लगे सभी का कहना था कि आपको पूरा अंतराय है उपवास मत करना और अभी तीन दिन के बाद एक ही आहार तो हुआ है फिर आज भी अंतराय आ गया और अष्टमी-चतुर्दशी भी नहीं है कि आपका नियम हो... सभी अपने-अपने तरीके से मना कर रहे थे...परंतु पू. माताजी की धारणा बन जाये तो उसका बदलना बहुत मुश्किल है... यद्यपि उन्होंने सायंकाल तक तो उपवास नहीं लिया लेकिन जब सुबह सामायिक के समय उन्हें चक्कर आने लगे तब उनको अपने आप पर बहुत गुस्सा आया कि प्रतिकूलता में साधना करने के लिए बाहर का परिकर तो पहले ही मना कर रहा है और यह शरीर भी अपना रंग दिखाने लगा जैसे-तैसे मन को तैयार किया और कर्म ने परीक्षा लेना शुरू कर दिया अब मुझे परीक्षा में फेल नहीं पास होना है सो उसी समय सामायिक के बीच में ही संकल्प कर लिया कि मैं आज उपवास करूँगी और उपवास का संकल्प करते ही स्वास्थ्य ठीक हो गया, अर्थात् परीक्षा होते ही प्रश्न का हल सही हो गया तो पास हो गए। और परीक्षा में पास होने पर बड़ी प्रसन्नता थी।

धन्य हैं रत्नत्रय प्रदातृ गुरु माँ जो कभी अपने मन को अपनी आत्मा पर हावी नहीं होने देती हैं, सदैव आत्मा की ही सुनती हैं और तदनुसार ही कार्य करती हैं। हे गुरु माँ! मुझे भी ऐसा साहस और संबल देना कि हम मन को जीत सकें और अपनी आत्मा के समीप पहुँच सकें। इसी भावना से अद्भुत साहसी गुरु माँ के चरणों में वंदामि...।

44. मात्र दिखता था लक्ष्य

ब्र. बहिनों के केशलोंच व व्रत लेने की चर्चा के दौरान पू. आर्यिका श्री ने आश्चर्यजनक व मोक्षमार्ग के प्रति अतिरुचिपूर्ण प्रसंग सुनाया कि- मुझे पता ही नहीं था कि व्रत पहले लिया जाता है, फिर केशलोंच करते हैं तब सफेद साड़ी पहनते हैं। मैं जब संघ में आयी थी तो एक ड्रेस लेकर ही आयी थी संघ में आये तब महाराज से भी व्रत नहीं लिया न केशलोंच की पूछी। एक महीने तक रहे। फिर ब्र. कुसुम दीदी थी सो उन्होंने अपनी ही दो सफेद ड्रेस दे दी और कहा कि तुम अब रंगीन वस्त्र मत पहनना। सो उनकी सफेद ड्रेस पहनने लगे। एक दिन दीदी के पास बैठे थे। बैठे-बैठे ही बात-बात में दीदी से कहा कि मुझे भी केशलोंच करना है सुनकर दीदी ने कहा कर लो लाओ मैं कर देती हूँ और उसी समय मैंने उनसे केशलोंच करवा लिए। न महाराज से पूछा और न ही महाराज ने कुछ कहा। अभी भी व्रत का संकल्प नहीं लिया था न ही यह पता था कि हमें ब्रह्मचर्य व्रत का संकल्प करना है। सो 3-4 महीने तक बिना नियम के ही रहे। फिर जब कुसुम दीदी की दीक्षा हुई तब उन्होंने प्रथम आहार के दिन नियम लिया था कि जो एक साल का ब्रह्मचर्य व्रत लेगा उससे ही आहार लूँगी। उस समय उन्हें आहार देते समय मैंने जीवनभर का ब्रह्मचर्य व्रत लिया था। मैं तो सिर्फ यह जानती थी कि दीक्षा लेते हैं तभी सभी नियम लेते हैं। यह सब कुछ मैं नहीं जानती थी। पू. आर्यिका श्री के मुखारविंद से जब यह सुना तो सुनकर ऐसा लगा कि माताजी आपको सचमुच पिच्छी-कमण्डलु से ही प्रयोजन था और प्रयोजन था कि मैं कब साधु बन जाऊँ अर्थात् आपकी दृष्टि मात्र लक्ष्य की ओर ही केन्द्रित रही। सदैव अपने लक्ष्य को ही ध्यान में रखकर साधने वाली गुरु माँ के चरणों में हम भी अपने लक्ष्य को साधें इसी भावना से वंदामि...।

45. संक्लेश नहीं

हम अपना कार्य सिद्ध कर लें और संक्लेश से बच जायें इस संदर्भ में

पूज्या आर्यिका श्री ने अपने जीवन की घटना सुनायी- पू. आर्यिका श्री को बचपन से किसी भी प्रकार से किसी के भी साथ तू-तू मैं-मैं करना पसंद नहीं था। सामने वाला कुछ कह रहा है तो मौन रख लो चुपचाप सुन लो और समय आने पर उत्तर दो गृहस्थ अवस्था में ऐसी परिस्थिति बनी। हुआ ऐसा कि शादी के 2-4 माह बाद ही लूणदा जाना पड़ा वहाँ कोई नहीं था। मात्र दो ही थे (पति-पत्नि) जीवन में कभी आलू नहीं खाये थे, (लूणदा) वहाँ परिस्थिति वशात् सामने वाले (पति) ने भोजन बनाया। वे तो चाहते ही थे कि कैसे न कैसे हम इनको आलू प्याज खिला दें और अवसर मिला सो उन्होंने आलू की सब्जी बनाई और भोजन परोसते समय मात्र आलू की सब्जी और रोटी परोस दी। थाली देखते ही माथा ठनक गया अब क्या करें? पू. माताजी ने सोच लिया कि जो हो जाए सो हो जाए कुछ कहूँगी भी नहीं और आलू भी नहीं खाऊँगी। अब क्या करूँ....। नहीं खाती हूँ तो सामने वाला लड़ेगा, रौव दिखायेगा संक्लेश होगा। सो कुछ भी नहीं कहा और चुपचाप सब्जी के पानी के साथ रोटी खायी सो उनको भी क्लेश नहीं हुआ प्रसन्न रहे और किसी भी प्रकार से आलू नहीं खाये तथा संक्लेश से बच गए।

इस प्रकार पू. आर्यिका श्री बचपन से ही अपने आपको संक्लेश से दूर रखने का पुरुषार्थ किया और उसमें सफल भी हुईं।

हम सभी भी इसी प्रकार अपने नियम निभाते हुए भी संक्लेश परिणाम से आर्त्त-रौद्र ध्यान से बचे रहें। इसी भावना से नंत-नंतशः वंदामि...

46. विवेक से करें काम

पावन वर्षायोग 2009 बामौरकलां में तत्त्वार्थ-सूत्र की कक्षा में सातवें अध्याय में बारह व्रतों को समझाते हुए बताया कि धर्म कहाँ-कहाँ कर सकते हैं। जैसे घर में रहकर भी खाते-पीते, सोते, कमाते भी पाप से बच सकें तो हम किस प्रकार से बचें, इसके लिए क्या उपाय है? इस संदर्भ में पू. आर्यिका श्री ने अपने जीवन की क्रियायों से जुड़ी हुयी वार्ता सुनायी...

मैंने जबसे आचार्य शिवसागरजी महाराज के प्रवचन सुने थे। तभी से हर कार्य करते समय यही ध्यान रखते थे कि कहाँ कौन-सा काम करें ताकि पाप से भी बच जाएँ, कार्य भी हो जाए और सामने वाला प्रसन्न भी रहे। जब घर में सुबह-सुबह काम की बात आती कि या तो घर में झाड़ू-पौंछा लगाओ, पानी भरो या फिर 1 कि. मी. पैदल जाकर दूध लाओ। उस समय मैं 1 कि. मी. जाकर सर्दी के समय में भी दूध ले आती थी क्योंकि उसमें हिंसा कम थी जाना है सो नीचे देख-देखकर चले गए, यदि पानी भरते, झाड़ू-पौंछा लगाते तो अधिक हिंसा होती है। पानी भरो तो बिना छना पानी भरा रहेगा। सब उसी का प्रयोग करेंगे तो हमें भी छठा अंश लगेगा। इसी प्रकार कपड़ा धोना और सुखाना सूखने के बाद उठाकर रखना इनमें से मैं कपड़े सुखाना और सूखने के बाद उठाकर रखने वाला कार्य पसंद करती थी, क्योंकि कपड़े धोने में धोते समय बिना छने पानी का प्रयोग और साबुन लगाना पड़ेगी साबुन का पानी नाली में से होकर जहाँ तक जायेगा वहाँ तक के त्रस जीवों की हिंसा होगी। कपड़े सुखाने में और उठाकर रखने में इस प्रकार के पाप से बच सकते हैं और समय देकर कार्य भी हो जायेगा। इसी प्रकार भोजन के समय कहा जाता था कि घर में बर्तन साफ करो या दुकान पर जाकर बैठो बापू को भोजन करने भेजो तब मैं झट से दुकान पर जाकर बैठ जाती, दुकान तक आने-जाने में थक तो जाते थे परंतु बर्तन साफ करते समय होने वाले आरंभ... के पाप से बच जाते थे। इस प्रकार बुद्धि लगाकर सभी कामों में यह क्रिया करती थी। पूरी वार्ता को सुनकर किसी एक श्रावक ने प्रश्न किया कि - पू. आर्यिका श्री वह काम भी तो किसी न किसी को करना पड़ेंगे?

पू. आर्यिका श्री- यह सच है कि कोई न कोई तो वह कार्य करेगा परंतु हमें यह सोचना चाहिए कि हम कैसे पाप से बचें दूसरों के बारे में सोचोगे तो अपना भी नहीं होगा। धर्म स्वयं का होता है दूसरे का नहीं। हम करेंगे तो हमें मिलेगा दूसरा करेगा तो उसको मिलेगा। फिर हमें अपना कल्याण करना है तो अपने विवेक बुद्धि से कार्य चुनकर करना चाहिए।

वार्ता सुनकर सभी अवाक् रह गये कि धन्य हो पू. आर्यिका श्री आपको जो आपकी बचपन से ही अहिंसा धर्म के प्रति उत्कृष्ट भावना थी तभी तो पूर्णतः पापों का त्याग करके उत्तमोत्तम अहिंसा धर्म को प्राप्त करने का पुरुषार्थ अनवरत रूप से चल रहा है और नीति भी यही है कि सही दिशा में किया गया पुरुषार्थ एक दिन मंजिल प्राप्त कराता ही है।

बचपन से ही गुरु का उपदेश पाकर अहिंसा धर्म के प्रति सजग रहने वाली गुरु माँ निश्चित एक दिन अहिंसा धर्म की पूर्णता को प्राप्त करके अपने शुद्ध स्वभाव को प्राप्त करके संसार से पार हो जायेंगी और हम सभी भी गुरु माँ का ध्यान करके अहिंसा की पूर्णता को प्राप्त करें।

इसी भावना से पू. आर्यिका श्री के चरणों में कोटि-कोटिशः वंदामि...।

47. अनुपम वात्सल्य

प्रसंग सम्मेदशिखरजी की यात्रा का है। जब पू. आर्यिका श्री लगभग 40-45 कि. मी. चलकर तीर्थराज की वंदना करने के लिए बिहार कर रही थीं। बिहार करते-करते हम कोतमा नगर में पहुँचे- गर्मी की अधिकता होने से 8-10 दिन के लिए बिहार रुक गया। इसी बीच आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज का समाधि महोत्सव का समारोह मनाया। समारोह मनाने के अवसर पर ही पू. आर्यिका श्री के प्रवचन सुनकर उन सभी ने अपने जीर्ण-शीर्ण मंदिर का जीर्णोद्धार करने का नियम लिया और सभी ने कुछ न कुछ चीज का त्याग कर दिया उनके साथ पू. आर्यिका श्री ने भी शक्कर का त्याग किया था जब तक कि उनका मंदिर नहीं बन जायेगा। कार्यक्रम के उपरांत जब पू. आर्यिका श्री ने बिहार किया गर्मी तो प्रचण्ड रूप लिए ही थी फिर भी बिहार करके लगभग 10-12 कि.मी. चलने के बाद भी गाँव नहीं आया....श्रावकों के कहने पर सूर्यास्त के बाद भी 1 कि. मी. चल लिया, फिर भी स्थान नहीं दिख रहा था...अंततोगत्वा अपने व्रतों का पालन करते हुए पू. आर्यिका श्री एक वृक्ष के नीचे ही रुक गयीं और बोली अब रात्रि-विश्राम यहीं करेंगे। हमारे साथ बिहार

में एक-दो ही श्रावक थे उन लोगों से जब हम बहिनों ने कहा कि भैया एक पाटा लेकर आना। लेकिन श्रावकों के पास साधन न होने से मात्र चटाई लेकर आ गए। पू. माताजी का चटाई का त्याग था, यद्यपि विशेष परिस्थिति की छूट थी, फिर भी पू. माताजी का मन चटाई पर सोने का नहीं था वो बड़ी ही मुदितमना हो प्रसन्न हो रही थी कि आज धूल में सोने का अनुभव होगा। भूमि-शयन करके हमें भी उन मुनिराजों की साधनावत् साधना करने का अवसर मिला है जिनको हम शास्त्र में पढ़ते हैं, गुरु से सुनते हैं, आज अवसर आया है तो अनुभव भी करें। लेकिन तभी सामने एक विकल्प आ गया कि ये बहिनें कैसे सोयेंगी। सामायिक तो जमीन पर ही बैठकर कर ली। जैसे ही सोने का समय आया तो पू. आर्यिका श्री ने हमारी चटाई का एक भाग मार्जन करके बिछाया और सो गयी उनको चटाई पर सोया देखकर हम दोनों बहिनें भी चटाई बिछाकर सो गए। हम तो लेटते ही नींद की गोद में चले गए सो गए। लेकिन पू. आर्यिका श्री हमारी नींद लगते ही चटाई से उठकर जमीन पर ही सो गईं। जब 2-2$^{1}/_{2}$ बजे हमारी नींद खुली तब देखा पू. आर्यिका श्री जमीन पर ही सोयीं हैं और ऐसे सो रही हैं। जैसे बहुत अच्छे अनुकूल स्थान पर सो रहीं हों। मैं देखती ही रह गई और तत्क्षण उसी समय चटाई से हट गयी परंतु पू. गुरु माँ का वात्सल्य भाव देख-देखकर आँखों में आँसू आ गए। हमें उनके इस वात्सल्य को देखकर लोक प्रचलित बात याद आ गयी कि सच में माँ ऐसी ही होती है कि स्वयं नीचे सोकर भी अपने बच्चों को बिस्तर पर सुलाती है स्वयं भूखी रहकर भी बच्चों को खिलाती है। उसी ममता वात्सल्य की साकार मूर्ति आर्यिका श्री में दिख रही थी हम बच्चों को तो अच्छे से चटाई पर सुला दिया और स्वयं ने अपनी साधना कर ली और सुनहरे अवसर का लाभ उठाकर कर्म निर्जरा भी कर ली।

प्रातःकाल दैनिक आवश्यकों से निवृत्त होकर जब मैंने पूछा आपने ऐसा क्यों किया, आप सोते समय तो चटाई पर सोयीं थी फिर ऐसा क्यों किया तब पू. आर्यिका श्री बोलीं- बड़ी मुश्किल से तो ऐसे अवसर मिलते हैं, उनमें

भी यदि साधना नहीं करी तो फिर मात्र बातें करने से कुछ नहीं होगा। थ्योरीटीकल तो कर लेते हैं लेकिन जब प्रेक्टिकल करेंगे तभी कर्म से छूट पायेंगे...।

सुनकर ऐसा लगा कि सच में ज्ञानी तो वही है जो चर्चा नहीं चर्या करके ज्ञान का उपयोग करते हैं और पू. आर्यिका श्री ने भी अपने ज्ञान का उपयोग करके इसमें सफलता प्राप्त की थी।

श्लाघनीय है चर्चा के साथ चर्या में साम्य बनाकर चलने वाली हमारी गुरु माँ। मैं उन्हीं के चरण कमल में प्रणाम करते हुए यही भावना भाती हूँ कि मेरा जीवन उन जैसा बन जाये....ऐसे ही परिणामों से कोटि-कोटिशः वंदामि...।

48. क्षयोपशम नहीं क्षायिक चाहिए

बिहारकाल में संघस्थ कक्षा चल रही थी, उसी समय कुछ त्यागी-व्रती व श्रावक-श्राविकायें दर्शनार्थ आये वे भी आकर कक्षा सुनने लगे कक्षा पूरी होने के बाद एक श्रावक ने कहा पू.माताजी हम लोगों ने आपके साहित्य का बहुत अच्छे से पठन-पाठन किया है, बहुत अच्छा लगा- आपका साहित्य ज्ञान के साथ-साथ आचरण की तरफ झुकाव उत्पन्न करता है। पढ़कर स्वयमेव ही उसे क्रियान्वित करने का मन सहज ही हो जाता है। उसी समय दूसरे एक विद्वान् भाई ने कहा कि - पू. माताजी मैंने आपकी तत्त्वार्थ-मंजूषा कृति 6-7 बार पढ़ी है, सच में आपके पास जबर्दस्त क्षयोपशम है या यूँ कहो कि क्षयोपशम की प्रकर्षता है। आपका ज्ञान के साथ-साथ चारित्र का भी क्षयोपशम सर्वश्रेष्ठ है।

कुछ देर तक जब वे श्रावक सारी बातें कहते रहे पू. आर्यिका श्री सिर नीचा करके सुनते रहे, 2-3 मिनट मौन रहने के बाद बोली- भैया यह सब मेरा नहीं गुरुओं का किया हुआ है उन्हीं का आशीर्वाद है, और फिर बात क्षयोपशम की है तो मुझे क्षयोपशम की प्रकर्षता नहीं क्षायिक ज्ञान चाहिए। ज्ञानावरण कर्म का क्षय हो जाए ऐसा ही पुरुषार्थ करना है बस यही भावना रखती हूँ और उसी को प्राप्त करने के लिए मेरा उद्यम हो।... इसी बीच में संघस्थ सदस्यों ने

पूछ लिया कि पू. आर्यिका श्री कल आपका पेट फूल रहा था, तकलीफ हो रही थी, अब कैसा है? तब पू. आर्यिका श्री बोली- अरे ये पेट मैं नहीं हूँ जो हो रहा था वह मुझमें नहीं हो रहा था मुझमें तो यह सब होता ही नहीं है, शरीर मेरा नहीं है। दुर्लभता से रत्नत्रय मिला है उसकी सही-सही आराधना साधना कर लो वही साथ देने वाला है, शेष सब यहीं रह जायेगा। सुनकर सभी मौन रह गए और सोचते रहे कि सच अध्यात्म की चर्चा को चर्या में अक्षरशः पालन करने वाली हमारी निस्पृह गुरु माँ धन्य हैं... और उनके सौम्य चेहरे पर चमकते हुए अध्यात्मिक तेज पुंज को निहारते रहे।

अध्यात्म हमारे रग-रग में हो हमारा मोक्षमार्ग प्रशस्त हो इसी भावना से कोटिशः नमन....।

49. (जिनवाणी पर अद्भुत श्रद्धा) अतिशय सजगता

आस्रव-त्रिभंगी ग्रंथ का स्वाध्याय करते समय धर्म व शास्त्र की दुर्लभता समझाते हुए पू. आर्यिका श्री ने कहा कि जो वस्तु दुर्लभ हो और हमें अनायास मिल जाये तो बहुत खुशी होती है हमारे साथ भी ऐसा हुआ था....

जब मैंने दीक्षा ली थी तब मुझे आवश्यकों के बारे में कुछ भी पता नहीं था और न ही कभी पू. महाराज श्री ने बताया न कभी बड़ी माताजी (आ. विशालमती माताजी) ने इस संदर्भ में चर्चा की। उस समय आचार्य श्री (पू. विद्यासागरजी महाराज) के यहाँ पर भी आर्यिका दीक्षा नहीं हुयी थी कि वहाँ से जानकारी कर ले। सो जितना जैसा बड़ी माताजी करते थे वैसा करते रहे। तब एक दिन भीण्डर से एक श्रावक आये और ''श्रमण-चर्या'' (आ. विशुद्धमती माताजी सतना वाली) भेंट की, जैसे ही उसे खोलकर देखा तब इतनी प्रसन्नता हुई थी जैसे कि गरीब को रत्नों का खजाना मिल गया हो। पढ़ते ही ऐसा लगा कि अब हमारा आर्यिका बनना सार्थक हो गया पूरी चर्या का, कृतिकर्म का ज्ञान मिल गया और उसको पढ़ करके ही हम लोगों ने अपने आवश्यक... करना शुरू कर दिया। उसी समय उन्हीं श्रावक ने तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ भेंट

किया- ग्रंथ मिलते ही ऐसा लगता था कि कब पढ़ लें और 8-15 दिन में ही पूरा पढ़ लिया। पहले ऐसे हर जगह शास्त्र नहीं मिलते थे और हम यह भी नहीं जानते थे कि कहीं से किसी से मँगवा लें और फिर किसी से कहने में संकोच भी होता था। इसलिए जब कभी जो शास्त्र मिलते थे तो देखकर बड़ी प्रसन्नता होती थी। और हम पाँचों ही एक साथ बैठकर एक ही ग्रंथ से अध्ययन करते थे, तब भी सभी को समझ में आता था और समझकर आज भी सभी को विषय याद है। इसी प्रकार एक अंजान श्रावक ने कर्मकाण्ड लाकर दिया, एक श्रावक के यहाँ रद्दी में राजवार्तिक ग्रंथ आया तो वह लाया और बोला माताजी आपके काम का होगा उसे देखकर थोड़ा विकल्प भी आया कि जिनवाणी की ऐसी स्थिति हो रही है।... लेकिन हमें तो स्वाध्याय की इतनी रुचि थी सो 1 महीने में ही दोनों ग्रन्थों का स्वाध्याय कर लिया। हम लोगों ने प्रायः सभी शास्त्रों का स्वाध्याय एक साथ और एक ही ग्रंथ से किया है।... आज है कि पढ़ने के पहले ही पाँच-दस चाहिए।

सारी चर्चा सुनकर ऐसा लगा कि सच है दुर्लभता से मिली वस्तु संभालकर रखी जाती है और पू. आर्यिका श्री की रुचि देखकर आश्चर्य भी हुआ कि तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ को 15 दिन में पूरा पढ़ लिया और आज भी वो विषय परिमार्जित है। मोक्षमार्ग में चलकर हमारा हर समय जिनेन्द्र भगवान् की वाणी सुनने में, पढ़ने में तदनुसार आचरण करने में ही व्यतीत हो ताकि मोक्षमार्गी बनना सार्थक हो जाए और क्रमशः मोक्ष मंजिल को पा जाए ऐसी भावना करती हूँ और इसी भावना की पूर्णता के लिए अपनी परमोपकारी रत्नत्रय प्रदातृ पू. गुरु माँ के पादपयोज में हर पल की अनंत-अनंत वंदामि...।

50. याद रखो घर किसलिए छोड़ा है ?

गुरु की चर्चा को चर्या में लाना चाहिए - पथरिया में ब्र. बहिनें पू. आर्यिका श्री के दर्शनार्थ आयीं थीं, उनसे उनके स्वास्थ्य संबंधी चर्चा के दौरान पू. आर्यिका श्री ने पूछ लिया कि तुम्हारा स्वास्थ्य अब कैसा है? सुना था

2-3 महीने से खराब चल रहा है... सुनकर बहिन बोली हाँ माताजी मुझे तो 2-3 महीने नहीं वरन् 6 महीने से आर्त्त ध्यान ही चल रहा है। धर्म ध्यान में मन ही नहीं लगता था... तब पू. आर्यिका श्री ने अपनी बीमारी की अनुभूति सुनायी...जब मैं किशनगढ़ में बीमार हुई थी 8 महीने तक इतनी बड़ी बीमारी से पीड़ित रही थी कि यहाँ से 10-15 कदम चलने पर भी 2 बार विश्राम करना पड़ता था। श्वास भी कभी-कभी ढंग से नहीं ले पाते थे। फिर भी मुझे कभी आर्त्तध्यान नहीं हुआ- मैं तो स्वाध्याय भी करती थी पूरे दिन में 5-7 बार जंगल जाती थी 3-4 बार कफ का डिब्बा साफ करती थी पूरे आवश्यक करते थे, उसके अलावा भी दो बार $1^{1}/_{2}$ घंटे बैठकर जाप करती थी। फिर भी बड़ा स्वयंभूस्तोत्र याद किया था, कर्मकाण्ड का शुद्धिपत्र बनाया था। कभी भी आर्त्तध्यान नहीं हुआ। बीच-बीच में एक-दो बार ऐसा भी हुआ था कि अब मैं बचूँगी नहीं तो समाधि की साधना भी करती थी। बड़ी माताजी से (आ. विशालमती माता जी) भगवती आराधना का स्वाध्याय सुनती थी लेकिन कभी भी गलत विचार नहीं आये जब स्वयं का किया हुआ कर्म है वो ही उदय में आ रहा है तो उसमें अब बिगाड़ नहीं करना है पुनः बंध नहीं हो ऐसा प्रयास करते थे। जैसे-तैसे उस बीमारी से उठे तो मलेरिया और पीलिया हो गया लगभग 2-$2^{1}/_{2}$ माह तक...परेशान किया असातावेदनीय ने परंतु उस समय भी मैं भक्ति-पाठ, समाधिमरण पाठ याद करती रहती थी और एक ही भाव रहता था कि हमने आर्त्त-रौद्र परिणाम करने के लिए, संक्लेश करने के लिए, घर नहीं छोड़ा है दीक्षा नहीं ली है, हमने तो अपना कल्याण करने के लिए ही दीक्षा ली है। अरे ये सब तो मार्ग के कंकर हैं, कंटक हैं इनके बीच से ही या इनके ऊपर चलकर ही हमें अपनी मंजिल पर पहुँचना है। अरे बहिन! मैं क्या हमारी नीली बहिन भी जब गिरी तब उसने कोई संक्लेश नहीं किया $2^{1}/_{2}$ महीने तक लेटे-लेटे भी बड़ा स्वयंभूस्तोत्र, पंच स्तोत्र, छहढाला याद कर ली उसे भी कभी ऐसा नहीं लगा कि मेरा धर्मध्यान नहीं हो रहा है प्रसन्न रहती और यही कहती थी कि जो हो गया सो गया समय पर सब ठीक हो जायेगा।

बहिन यह सब मैंने अपनी प्रशंसा के रूप में नहीं सुनाया बल्कि इसलिए सुनाया कि मरणासन्न स्थिति में मुझ जैसी अल्पबुद्धि वाली भी इतना कर सकती है तो तुम लोग (सदैव) अधिकांश आर्यिका श्री के पास रहती हो उनकी साधना चर्या चर्चा से, त्याग-तपस्या से, आचार-विचारों से परिचित हो उनको अपना सब कुछ मानते हो, आदर्श मानते हो। संघ में और भी अनेकानेक साधु वृन्द भी कैसी-कैसी विकट परिस्थितियों में भी अपनी साधना करते रहते हैं, त्याग तपस्या में संलग्न रहते हैं, कभी धर्मध्यान नहीं छूटता है... तब भी तुमने ऐसा किया धर्मध्यान में मन नहीं लगाया, यह अच्छी बात नहीं है, वैसे तो हम सब करते ही हैं पर सही समय पर आकर जब हमें अपने आदर्श गुरु की आदर्श परम्परा का निर्वाह करना था, आर्त्तध्यान से बचना था, परीक्षा में पास होकर गुरु के चरणानुगामी बनना था। उस समय ही भूल गए तो क्या? अरे याद करती आचार्य श्री को जब हरपीस की वेदना थी, तब भी उन्होंने उस समय कितनी शांति व स्थिरता से सहन किया और इतनी भारी (हजार बिच्छुओं के एक साथ काटने जैसी) वेदना के समय भी आर्त्तध्यान तो दूर चेहरा की सौम्यता भी कम नहीं हुई... उनको ही याद करती रहती तो भी आर्त्तध्यान नहीं होता।

इसलिए बहिन गुरुओं को आदर्श बनाकर महापुरुषों की गाथा पढ़कर सुनकर हमेशा संक्लेश से बचना चाहिए- यह तो सब संसार की अवस्थाएँ हैं स्वयं का किया कर्म है वो आयेगा जायेगा उसमें समता रख लो तो ठीक है। सहन तो करना ही पड़ेगा चाहे रोकर करो या हँसकर रोकर सहन करने में पुनः इससे भी अधिक सहन करना पड़ेगा, हँसकर सहन करोगे, समता रखोगे तो वो वापस नहीं आयेगा।

जब सारी वार्ता हमने सुनी तो लगा कि धन्य हो माताजी आप जो सदैव अपने लक्ष्य को याद रखती हो और हमें भी यही सिखाती हो कि हमने दीक्षा किसलिए ली है, याद रखो और अपने गंतव्य तक पहुँचने का पुरुषार्थ

करो।

पू. आर्यिका जी मैं आपके ही चरणकमल में प्रणाम करते हुए आपसे ही प्रार्थना करती हूँ कि हे जगज्जननी, जगकल्याणी, निस्पृह साधिका मम जीवन दायिनी माँ मुझे शीघ्र आत्म सिद्धि प्राप्त हो, ऐसा शुभाशीष सदैव देते रहना।

51. अद्भुत वैराग्य

प्रसंग वशात् पू. आर्यिका श्री ने केशलोंच संबंधी संस्मरण सुनाया- जब हम लोग मोक्षमार्ग में आये ही आये थे तब मोक्षमार्ग के संबंध में कुछ भी नहीं जानते थे। एक बार ब्रह्मचारिणी अवस्था में मैं और संतोष दोनों ही केशलोंच करने बैठे किसी से पूछा नहीं समझते ही नहीं थे कि बड़ों से इसके लिए पूछना चाहिए?.. सो हम लोगों ने केशलोंच करना शुरू कर दिया... थोड़े से ही केशलोंच हो पाये थे कि श्रावक भोजन के लिए बुलाने आ गए तो बीच में ही उठकर भोजन करने चले गए आकर फिर केशलोंच करने बैठ गए। हम यह भी नहीं जानते थे कि बीच में केशलोंच छोड़ देंगे तो सिर फूल जायेगा या और कुछ होगा बस यह जानते थे कि मोक्षमार्ग में आगे बढ़ना है।

पूरी चर्चा सुनकर ऐसा लगा कि पू. माताजी आपके अंदर कितना वैराग्य था शरीर के प्रति निस्पृहवृत्ति कि यह भी अनुभव नहीं हुआ कि सूजन आ गयी उसके बाद वहीं से फिर बाल निकाल लिए कोई विकल्प नहीं आया।

धन्य हो पूज्य माताजी आपकी जो शुरू से ही शरीर के प्रति निस्पृहवृत्ति रही तभी तो आज आप साधना की ऊँचाइयों को छूने का सफल पुरुषार्थ कर रही हैं।

मैं भगवान् से यही प्रार्थना करती हूँ कि मेरी गुरु माँ साधना के अंतिम सोपान को पाकर साध्य को भी प्राप्त करें और मैं भी आपके साथ-साथ चलकर अपने साध्य को प्राप्त करूँ, इसी भावना से आपके चरणारविन्द में सादर सविनय नमन...।

52. सूर्य ने भी साथ दिया

प्रसंग नैनागिरि की वंदना करके द्रोणगिरी सिद्धक्षेत्र की ओर जाते समय का है। सर्दी का मौसम था, बिहार चल रहा था, बीच में एक दिन मौसम खराब हो गया, दिन में सूर्य का निकलना तो हुआ ही नहीं वरन् थोड़ी-थोड़ी वारिश भी होती रही जिससे बकस्वाहा ग्राम में रुक गए... दूसरे दिन चतुर्दशी थी पू. आर्यिका श्री का उपवास था और केशलोंच भी करना था... प्रातःकाल से ही जोरों से वारिश हो रही थी... मौसम अत्यधिक ठण्डा था, अंदर कमरे में भी हाथ अकड़ रहे थे.. सो हम सभी ने पू. आर्यिका श्री से कहा कि आप आज केशलोंच नहीं करो अभी तीन महीने ही हुए हैं और मौसम इतना ठण्डा है सो हाथ भी अकड़ेंगे और सिर भी अकड़ जायेगा। तब पू. आर्यिका श्री प्रमुदित होती हुई बोली-पानी ही नहीं ओले भी बरस जायें तो भी मैं आज ही केशलोंच करूँगी... इतना सुनहरा अवसर मिल रहा है कर्म निर्जरा का उसका लाभ नहीं उठाया तो मैं मूर्ख ही मानी जाऊँगी। हम सुनकर कुछ भी नहीं कह पाये.. मात्र पू. माताजी को देखते रहे।

और पू. माताजी ने केशलोंच की भक्तियाँ करके केशलोंच करना शुरू कर दिया..केशलोंच हो गया तब उसके बाद वैयावृत्ति के लिए निवेदन किया तो तब न ही घी तेल लगवाकर मालिश करवायी न ही सामान्य से हाथ-पैर दबवाये.. पूरे दिन पूरी रात सर्दी से शरीर काँपता रहा परंतु आत्मा नहीं कांपी, मन विचलित नहीं हुआ, सच है जो साधक अपने चैतन्य निज आत्म गर्भालय में रमण करते हैं, वहीं बैठे रहते हैं समता के उपवन में क्रीड़ा करते हैं तपरूपी अग्नि को तापते रहते हैं। महामुनिराजों की साधना के चिंतन रूपी गर्मी में अपना उपयोग लगाते हैं उसे बाहर की सर्दी कैसे कंपा सकती थी। प्रातःकाल पू. आर्यिका श्री के सौम्य-शांत चेहरे को देखकर लग रहा था कि सर्दी की लंबी रात भी आत्म चिंतन में सहज ही व्यतीत हो गयी हो।

प्रातःकालीन क्लास के बाद हम सभी ने पुनः विनम्र निवेदन किया कि

पू. माताजी आपने कल साधना कर ली आज हमें भी सेवा का अवसर देकर कुछ आत्मोन्नति का कार्य करने दीजिए अर्थात् अब तो वैयावृत्ति करवा लीजिए। तब पू. आर्यिका श्री बोली मेरा नियम है आज सूरज निकलेगा तो मैं वैयावृत्ति करवाऊँगी और यदि आठ दिन तक सूर्य नहीं निकला तो भी मैं वैयावृत्ति नहीं करवाऊँगी.. सुनकर हम सभी सन्न रह गए क्योंकि प्रकृति का क्या भरोसा कब क्या परिवर्तन हो जाये मौसम है उसे हम बाँध थोड़ी ही सकते हैं और फिर कर्म के संदर्भ में भी कहा नहीं जा सकता है, किन्तु माताजी को कोई विकल्प नहीं नियम लेकर बहुत प्रसन्न हो रही हैं। हम सभी ने मात्र भगवान् से प्रार्थना करने का ही विचार बनाकर प्रार्थना करना शुरू कर दी कि हे भगवान् सूरज निकल जाये। और णमोकारमंत्र पढ़ते ही बाहर निकले तो आकाश स्वच्छ साफ दिखाई दे रहा था और शौच से लौटकर आये तब तक तो सूर्य का प्रकाश और प्रताप चारों ओर बिखर रहा था - सभी प्राणियों को जीवन विकास का सूत्र मिला और हम सभी भी बड़े प्रसन्न थे। कि हमें भी वैयावृत्ति करने का अवसर मिला।

धन्य है हमारी गुरु माँ जो हर समय साधना के अवसर ढूँढ़कर साधना करके अपनी कर्म निर्जरा करती रहती हैं।

मुझे भी इतना साहस संबल और बुद्धि विवेक प्राप्त हो और मैं भी अपने लक्ष्य को प्राप्त करूँ। इसी भावना से गुरु माँ के चरणों में कोटि-कोटिशः नमन...।

सवाल आपके, जवाब आर्यिका श्री के

प्रश्न 1. : ब्र. बहिन - पू. माताजी अनुकूलता में रहकर तो सभी साधना हो जाती है परंतु प्रतिकूलता में नहीं हो पाती है?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - बहिन ऐसा नहीं है कि अनुकूलता में रहकर ही साधना हो पाती है, जिसे सही तत्त्व समझ में आ जाता है, वह पत्थर की लकीर की भाँति अपने मार्ग पर अपने लक्ष्य पर अटल रहता है और जिसे सही तत्त्व समझ में नहीं आता है तो वह पूर्ण अनुकूलता में रहकर भी विचलित हो सकता है। भूदेव-भवदेव की कथा पढ़ो - जब सही तत्त्व नहीं समझे थे तो मुनि बनकर भी 12 वर्ष तक पत्नी का ध्यान करते रहे और जबकि सारी अनुकूलता भी मुनि संघ में थे चारों तरफ मुनिराज साधना करते दिख रहे थे गुरु और साधर्मी मुनि जन अध्यात्म और वैराग्य पूर्ण स्वाध्याय सुना रहे थे, फिर भी लक्ष्य से विचलित रहे और जब सही तत्त्व समझ में आ गया तो प्रतिकूलता में भी ध्यान-साधना कर ली, ऋद्धियाँ प्रकट हो गयीं। अतः बहिन; तत्त्व को सही-सही समझो, समझने का पुरुषार्थ करो... ये अनुकूलता प्रतिकूलता कुछ भी नहीं हैं तथा अध्यात्म साथ में रखो।

प्रश्न 2. : ब्र. बहिन - पू. माताजी अध्यात्म की बात करो या यह कहो कि आत्मा के अलावा सभी पर द्रव्य हैं, तो सामने वालों को बुरा-सा लगता है।

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - बहिन अध्यात्म की बातें कहने की नहीं होती हैं करने की होती हैं, किसी को कहना थोड़े ही पड़ता है कि आत्मा के अलावा सभी परद्रव्य हैं यह तो अंदर में रखकर क्रियान्वित करना चाहिए और बहिन यह सच है कि

कहो तो बुरा-सा लगता है, लेकिन जब भी कल्याण होगा इन अध्यात्मपूर्ण भावों से ही होगा, हर समय याद रखो कि जो भी दिख रहा है सभी परद्रव्य है परद्रव्य ही है, इनसे मेरा कल्याण नहीं होगा, तुम भी अपना कल्याण करना चाहती हो तो तुम भी ऐसा ही याद रखो ऐसी ही धारणा बनाओ क्योंकि जब भी कल्याण होगा, इसी प्रकार की दृष्टि से होगा कि अपनी आत्मा के अलावा सभी पर द्रव्य हैं। हाँ व्यवहार में कुछ करते हैं या कुछ करना पड़ रहा है परंतु उसे ही सब कुछ नहीं मान लेना, यदि उसे सब कुछ मान लोगे तो कभी भी लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाओगे, यद्यपि है कड़वा पर वास्तविकता यही है।

प्रश्न 3. : ब्र. भैया - पू. माताजी आपको कितना ज्ञान है, कहाँ-कहाँ की बातें तर्क-आगम युक्ति के आधार से सिद्ध कर देती हो?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - भैया मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। द्वादशाङ्ग को देखो कितना विस्तृत विराट है... और उसी द्वादशाङ्ग की रचना होते होते इतने अक्षर बचे कि पद रूप नहीं बन पाये तब उन अक्षरों से अंगबाह्य की रचना हुई, उस जिनवाणी को देखो तो उसमें से मुझे कुछ भी नहीं आता है। हम तुलना झोपड़ी वाले से करते हैं तो हमारा ज्ञान महल रूप दिखता है और जब महल वाले से तुलना करते हैं तो झोपड़ी रूप दिखता है। कम दिखता है, इसलिए कभी तुलना नहीं करना चाहिए।

प्रश्न 4. : ब्र.भैया - तुलना तो किसी न किसी से करना ही पड़ेगा।

उत्तर : पू.आर्यिका श्री - तुलना करना आवश्यक नहीं है, क्योंकि छोटे से तुलना करोगे तो गर्व आयेगा और बड़ों से करोगे तो हीनता की अनुभूति होगी, अतः मेरे विचार से हमेशा बड़ों को देखते रहोगे तो विकास कर सकोगे।

प्रश्न 5. : ब्र. वर्ग – माताजी आजकल तो प्रवचन का जमाना है, लोग जल्दी प्रभावित हो जाते हैं।

उत्तर : पू. माताजी – नहीं आजकल भी प्रवचन से ज्यादा लोग आचरण को, चर्या को पंसद करते हैं, क्योंकि प्रवचन की अपेक्षा चर्या का स्थायी प्रभाव होता है। प्रवचन की प्रभावना तात्कालिक होती है सो थोड़े से ही समय में व्यक्ति विचलित हो जाता है, जबकि चर्या से प्रभावित होने वाला विपत्तियों में भी विचलित नहीं होता है, क्योंकि उसके कार्यान्वित रूप आदर्श सामने रहता है। इसलिए तो कहा है कि एक घंटा के उपदेश की अपेक्षा 1 मिनट की चर्या अधिक मार्गदर्शन देती है। अजमेर में एक एकांत पक्ष वाले सज्जन ने साधु को पानी से रोटी खाते देखा और उसमें भी साधु की सौम्य मुद्रा देखी तो उसी क्षण से एकांत हठ को छोड़कर अनेकांत धर्म के अनुयायी बन गये और आज भी 25 साल हो गये उनकी श्रद्धा साधु के प्रति यथावत् बनी हुई है, यह चर्या का प्रभाव है।

प्रश्न 6. : ब्र.वर्ग – पू.माताजी! हम रोज-रोज भगवान् के दर्शन करते हैं लेकिन अपूर्वता की अनुभूति नहीं होती है।

उत्तर : पू.आर्यिका श्री! भले ही अपूर्वता की अनुभूति नहीं होती है लेकिन लगनी अपूर्वता ही चाहिए, जब अपूर्वता लगेगी तभी हमारा मिथ्यात्व खण्ड-खण्ड हो जायेगा और जिस दिन ऐसा लगे कि भगवान् आपको देखकर अब कहीं कुछ भी नहीं दिख रहा है। मात्र आप ही आप दिख रहे हैं आपके पास ही बैठने का मन हो रहा है, आपके अलावा संसार में कुछ भी नहीं है, उसी दिन हमारा संसार सागर चुल्लु भर रह जायेगा। सती स्त्री जैसी स्थिति होना चाहिए। जिस प्रकार सती स्त्री को अपने पति की चर्चा, चर्या, समागम ही अच्छा

लगता है। उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि को जिनेन्द्र भगवान् की चर्या, चर्चा, समागम ही अच्छा लगता है। ऐसी ही अगाढ़ आस्था हमारे अंदर होना चाहिए सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के प्रति।

प्रश्न 7. : ब्र. वर्ग – पू. माताजी! अनंतानुबंधी कषाय समझ में नहीं आती है, सभी इसे शल्य की उपमा देते हैं, मिथ्यात्व की चिरसंगिनी भी कहते हैं आखिर क्या है यह?

उत्तर : पू. माताजी- अनंतानुबंधी कषाय बोलती नहीं है, दिखती भी नहीं है पर समय आने पर चूकती भी नहीं है, शल्य की भाँति है दिखता नहीं है लेकिन चलते ही चुभने से चूकता नहीं है। उसी प्रकार मिथ्यात्व अनंतानुबन्धी साथ-साथ रहती हैं, अनंतानुबंधी का उदय आया मतलब मिथ्यात्व का उदय आया और 20 वर्ष पुरानी बातें भी शूल की भाँति चुभती हैं। बातों की स्मृति अलग है और उनका चुभना अलग है। करोड़ों वर्षों बाद भी चुभाते रहना यह अनंतानुबंधी का कार्य है। यही मिथ्यात्व को साथ लगाये रहती है और संसार में भ्रमण कराती रहती है, लेकिन यह भी उन जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन से क्षण मात्र में नष्ट हो जाती है। होना चाहिए दर्शन करके अपूर्वता की अनुभूति।

प्रश्न 8. : श्रावक – पू. माताजी! भूख लगने से उपवास टूट जाता है क्या?

उत्तर : पू. माताजी – नहीं, भूख लगने से उपवास नहीं टूटता है। वरन् खाने के भाव करने से उपवास टूटता है। जब जोर से भूख लगे तब उपवास करो तो बहुत निर्जरा होती है। प्राण निकल जायें, ऐसी भूख लग रही है फिर भी असमय में नहीं खायेंगे, अयोग्य स्थान पर अयोग्य भोजन नहीं करेंगे और समय पर भी योग्य मिलने पर भी माँगकर नहीं खायेंगे, तब

क्षुधा परीषहजय है और उससे असंख्यात गुणी निर्जरा होगी। यद्यपि जीव खाता नहीं है, परंतु जीव के साथ 24 घंटे आहार संज्ञा लगी रहती है, असाता वेदनीय की उदीरणा होती रहती है और उस उदीरणा में समता रखना ही निर्जरा का कारण है। उपवास में भूख लगती है असाता की उदीरणा होती है। हो रही है पर हम उस भूख को सहन करेंगे। मोह जब हावी होता है तो भूख जोर से लगने लगती है और जब मोह मंद रहता है तब भूख कम लगती है। लेकिन उसे सहन करने से ही कर्मों की निर्जरा होती है। अनुकूलताएँ देखकर हर्ष विषाद नहीं करना चाहिए। जिसको उपवास करना है। उसको प्रतिकूलता से क्या और जिसको नहीं करना है। उसको अनुकूलता से क्या जिसने मन बना लिया है कि करना ही है। तो मौसम क्या करेगा? वह उपवास करेगा ही करेगा। उपवास में जितनी जोर से भूख लगती है। उसकी उतनी ही अधिक निर्जरा होती है। जितना जी घबरायेगा तड़फेगा उतनी ही अधिक कर्म निर्जरा होगी। क्यों, क्योंकि तड़फने के बाद भगवान् के प्रति श्रद्धा है। प्राण चले जाए पर संकल्प नहीं तोड़ेंगे। पूरी रात तड़फते रहने पर भी निर्जरा अधिक होती है। कोई कहे कि इसकी अपेक्षा पानी पीकर स्वाध्याय करो। लेकिन ऐसा नहीं है, क्योंकि स्वाध्याय करने से इतनी निर्जरा नहीं होती है। जितनी संकल्प नहीं तोड़कर वेदना सहन करने से होती है। वेदना होने पर सोचता है। मैं अलग हूँ शरीर अलग है। महापुरुषों को याद करके वेदना सहन करता है।

प्रश्न 9. : श्राविका – पू. माताजी! मेरा स्वाध्याय में बहुत मन लगता है पर सामायिक में नहीं लगता है?

उत्तर : पू. माताजी – स्वाध्याय में मन लगता है यह तो ठीक है, लेकिन फिर भी सामायिक करना चाहिए, क्योंकि स्वाध्याय

में प्रवृत्ति होती है और सामायिक में निवृत्ति रहती है। आचार्यों ने सामायिक में स्थित गृहस्थ को मुनिवत् कहा है। जबकि स्वाध्याय करते हुए श्रावक को कहीं पर भी मुनि के समान नहीं कहा है। भले ही धवला का स्वाध्याय ही क्यों न करें? समाधि करने के लिए सामायिक करना अति आवश्यक है। 10–15 माला फेरो बैठकर ताकि वृद्धावस्था में जब हमारी इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं। पढ़ नहीं सकते, देख नहीं सकते तब बैठे–बैठे या लेटे–लेटे भी हम णमोकार मंत्र का, ओम् का, अरहंत–सिद्ध का या अ सि आ उ सा आदि जाप्य कर सकते हैं। जाप्य करेंगे। स्वाध्याय में प्रवृत्ति होती ही है क्योंकि स्वाध्याय करते समय किसी के आने पर बोल भी लेंगे, बात भी कर लेंगे इधर–उधर देख भी लेते हैं और फिर उठाना रखना सँभालना रूप प्रवृत्ति भी होती है, लेकिन सामायिक में इन सब विकल्पों से परे बैठे रहो मात्र अपनी आत्मा का चिंतन। इसलिए सामायिक की साधना करना चाहिए।

प्रश्न 10. : श्राविका – पू. माताजी! नजर उतारना मिथ्यात्व है क्या?

उत्तर : पू. माता जी – नहीं, मिथ्यात्व नहीं है वरन् व्यवहार है। यदि धर्म मानकर करता है तो मिथ्यात्व की कोटि में आता है। जैसे हम नदी में नहाते हैं तो मिथ्यात्व का पाप नहीं लगता है हाँ यदि धर्म मानकर नहाते हो तो मिथ्यात्व का पाप लगेगा। वैसे भी लोक व्यवहार में नजर लगना माना जाता है और नजर मात्र चेतन को ही नहीं जड़ को भी लग सकती है, तभी तो मंदिर बनाते समय, मकान बनाते समय काला फीता बाँधते हैं, या और भी अन्य अनेक उपाय करते हैं, यहाँ तक कि प्रतिमाओं को भी जो अभी तक प्रतिष्ठित नहीं हैं, उसको भी काला धागा बाँधते हैं। एक बार हम पंचकल्याणक में गए

थे वहाँ बिना किसी कारण के तीन प्रतिमा चटक गयी थी। अतः व्यवहार से नजर लगती है और नजर उतारी भी जाती है।

प्रश्न 11. : ब्र. - गृहस्थ में रहकर हम अपना कल्याण कैसे करें?

उत्तर : पू. माताजी - जिस प्रकार हम अपने बेटा और भाई-बहिन के व अन्य कोई भी बेटा, बच्चे का पालन-पोषण करते समय अपने और दूसरे के बेटे में अंतर समझते हैं। बाहर में सभी कुछ समान करते हुए भी ये बेटा, बहिन, भाई का है मेरा नहीं है। इसी प्रकार की अनुभूति घर में रहते हुए सभी कार्य करते हुए भी ध्यान रखो कि ये मेरा नहीं है, ये माता-पिता, पुत्र, पत्नी, भैया, बहिन, मित्र सभी मेरे नहीं हैं। मैं इनका नहीं हूँ हमेशा-हमेशा ऐसी धारणा बनाकर रखो और बाह्य में 12 अणुव्रतों का पालन करो तो भरत चक्रवर्ती जैसे घर में रहते हुए भी अपना कल्याण कर सकते हैं। जब तक घर में रहकर वेश्या के समान प्रेम नहीं रखोगे तब तक तुम अपना कल्याण नहीं कर सकते हो। जैसे वेश्या का प्रेम दिखाऊँ होता है वैसे ही तुम्हारा परिवार जन के प्रति प्रेम रहे और स्वयं में एकत्व की अनुभूति करते रहोगे तो गृहस्थी में रहकर भी आत्म कल्याण कर सकते हो।

प्रश्न 12. : ब्र.- संकल्प और विकल्प क्या है?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - संकल्प- भविष्य की कल्पनायें करना और उनको पूरी करने के लिए परिणामों का उथल-पुथल मचना।

विकल्प-मुझे ऐसा करना है ऐसा नहीं करना है, उसे ऐसा करना था, उसने ऐसा कर लिया... आदि सभी विकल्प हैं। विकल्पों के आगे की स्थिति संकल्प है। विकल्प- अंदर में उस कार्य के प्रति ऊहापोह नहीं है, उधेड़बुन है संकल्प-

विकल्पों से कर्मों का बंध होता है। हम कर्मों का बंध करते हैं। हमारा मन भी इन संकल्प विकल्पों से ही विचलित होता है और फिर अलग-अलग स्थानों पर (संकल्प-विकल्प) शल्यों का प्रसंगवशात् अर्थ ग्रहण करना चाहिए। जैसे मुनि को स्वार्थी कहा और संसारी जीव श्रावक को भी स्वार्थी कहा है। स्व का अर्थ धन भी है और आत्मा भी है। अतः मुनिराज आत्मा को प्रयोजन मानते हैं तो स्वार्थी और गृहस्थ स्व का अर्थ धन को चाहता है सो स्वार्थी है।

प्रश्न 13. : ब्र.- दीक्षा लेने के भाव होने पर भी दीक्षा क्यों नहीं ले पा रहे हैं?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - दीक्षा लेने के भाव होने पर भी दीक्षा नहीं लेने में अंतरंग कारण चारित्रमोहनीय का उदय है और बाह्य में दीक्षा के योग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव रूप निमित्त नहीं मिले हैं या फिर पुरुषार्थ पूर्वक मिलाये नहीं हैं, भाई इसलिए दीक्षा नहीं हो पा रही है- चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम बढ़ाओ-दीक्षा हो जायेगी।

प्रश्न 14. : ब्र.- चारित्र मोहनीय का क्षयोपशम कैसे बढ़ाएँ?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री- साधुओं की चारित्रवानों की सेवा वैयावृत्ति करके उनकी पूजन करके उनके गुणगान करके और कषायों की मंदता रूप परिणामों से चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम बढ़ाकर परिणामों में निर्मलता लाकर हम चारित्र के मार्ग पर आगे बढ़ सकते हैं।

प्रश्न 15. : गृहस्थ श्रावक - पू. आर्यिका श्री अष्टमी चतुर्दशी को विशेष प्रतिक्रमण एकासन उपवास आदि क्यों करते हैं?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - अष्टमी-चतुर्दशी पर्व हैं और पर्व का अर्थ है, जो पवित्र करे आत्मा में विशुद्धि उत्पन्न करे। हर आठ-पन्द्रह दिन में पर्व आते रहते हैं और पर्व के दिनों में विशेष

धर्म करने का आदेश हमारे आचार्यों ने दिया है क्योंकि घरों में महिलाएँ अपने घर की विशेष सफाई 8 दिन में या 15 दिन में करती हैं, कोई-कोई चार माह में या वर्ष-वर्ष में सफाई करती हैं। जब विशेष सफाई करते हैं, तो विशेष पाप का आस्रव होता है सो उन पापों की आलोचना प्रतिक्रमण के माध्यम से करते हैं। वैसे तो रोज तीन बार प्रतिक्रमण करना चाहिए सुबह एक माला और शाम को एक माला दिन भर के रातभर के पापों के प्रायश्चित स्वरूप रोज फेरना चाहिए। भरत चक्रवर्ती रोज तीन बार अपने पापों का प्रायश्चित करते थे इसीलिए कपड़े उतारते ही केवलज्ञान हो गया। हमें रोज-रोज पापों की आलोचना करना चाहिए फिर भी यदि रोज-रोज नहीं कर पाते हैं तो अष्टमी-चतुर्दशी को तो विशेष रूप से दोषों का प्रतिक्रमण कर ही लेना चाहिए और भी कहा जाता है कि पहले अष्टमी-चतुर्दशी को माली बाजार में सब्जी नहीं लाते थे क्यों, क्योंकि जैन श्रावक हरी नहीं खाते हैं और श्रावक ऐसा इसलिए करते थे कि वह त्रस हिंसा का तो त्यागी होता ही है लेकिन पर्व के दिनों में स्थावर जीवों की हिंसा भी छोड़ देता है। गृहस्थ को आरंभी हिंसा का त्याग नहीं होता है। पंचसून रूप आरंभ तो करने ही पड़ते हैं अतः अष्टमी-चतुर्दशी आदि पर्व में उपवास करके उससे भी बच पाये। कोई कोई श्रावक हरी छोड़कर बड़ी-पापड़ खाते हैं यह ठीक नहीं है क्योंकि बड़ी-पापड़ खाने से त्रस जीवों की हिंसा होती है और हरी खाने में तो स्थावर जीवों की ही हिंसा होती है, सो उन्होंने हरी खाना भी शुरू कर दिया और बड़ी-पापड़ भी नहीं छोड़े। यह धर्म के साथ मजाक जैसा है। धर्म के रहस्य को समझ कर वास्तविक स्वरूप को समझना चाहिए ताकि हमारा अपना कल्याण हो सके।

प्रश्न 16. : श्रावक - धर्म निमित्तक किया गया संक्लेश भी पाप बंध का कारण है?

उत्तर : पूज्य आर्यिका श्री! भैया, क्लेश से सर्वदा पाप का ही बंध होता है। चाहे वह धर्म निमित्तक हो या योग निमित्तक हो। कभी-कभी हम कहते हैं कि हम तो वैयावृत्ति के लिए आहार के लिए गुरु दर्शन के लिए या उपवासादि करने के लिए संक्लेश करते हैं परन्तु चाहे वह तीर्थयात्रा के लिए हो और तो और धर्म सुनने के लिए भी संक्लेश क्यों न हो तो भी पाप का ही बंध कराने वाला होता है। यदि हम ऐसा नहीं माने तो जब कोई मरकर देव गति में जाता है और फिर यहाँ आकर परेशान करता है तब एक बार ऐसे ही एक महिला को देव आये और परेशान करने लगे जब किसी ने पूछा कि तुम इसे परेशान क्यों करते हो तब वह कहता है इसने हमें णमोकार मंत्र नहीं सुनाया था और भोजन करने चले गये थे। सुनकर ऐसा लगा कि यद्यपि धर्म सुनने के लिए भी संक्लेश किया है। लगता ऐसा है कि धर्म के लिए ही तो संक्लेश किया था, परंतु उस संक्लेश का फल मिला कि निकृष्ट जाति का देव बना। इससे ऐसा लगता है कि संक्लेश कैसा भी हो किसके लिए हो उसका फल पाप रूप ही मिलता है। अतः विशुद्धि बढ़ाने की अपेक्षा यह प्रयास करो कि संक्लेश नहीं हो, आर्त्त-रौद्र परिणाम नहीं हो। संक्लेश से बच जाओगे तो धर्मध्यान हो ही जायेगा विशुद्धि तो अपने आप ही बढ़ेगी।

प्रश्न 17. : श्रावक - पू. आर्यिका श्री! आप अभी कह रहे थे कि वृद्धावस्था को हमेशा याद रखो? जब हम अभी वृद्ध नहीं हुए हैं तो अपने आपको वृद्ध क्यों समझें?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - अरे हाँ भैया वृद्धावस्था को हमेशा याद रखो भले ही उम्र से वृद्ध न हुए हो लेकिन हमेशा अपने आप

को वृद्ध समझो ताकि अपनी इन्द्रियों पर कंट्रोल बना रहे अर्थात् मैं अब वृद्ध हो गया हूँ, हो रहा हूँ। मुझे अपनी विषय वासनाओं पर नियंत्रण रखना है। अपने खान-पान को संयमित रखना है। अब मुझे इधर-उधर की चीजें न खाकर अपनी रसना इन्द्रिय को वश में रखना है। मुझे समाधि की साधना की ओर अग्रसर होना है। इसके अलावा अब मैं वृद्धावस्था की ओर हूँ तो अब लोग मेरा तिरस्कार भी कर सकते हैं। मेरी बात को सलाह को माने ही माने जरूरी नहीं है। कोई मुझसे कुछ पूछे या न पूछे इन सब बातों का मुझे कोई विकल्प नहीं करना है। मुख्य रूप से मुझे संक्लेश परिणामों से बचना है। अब आयु बंध का भी समय आ गया है कोई भरोसा नहीं कब त्रिभाग पड़ जाये इसलिए मुझे अपने परिणामों को संभालकर रखना है। इसके साथ मुझे यह भी याद रखकर चलना है कि जब बिहार का समय आये, वैयावृत्ति का अवसर हो किसी की सेवा करना हो या आहार के लिए दूर जाना हो शौच के लिए जाना है तो मैं अभी वृद्ध नहीं हूँ मैं 20 कि.मी. बिहार कर सकता हूँ सभी की वैयावृत्ति भी कर सकता हूँ। इधर-उधर जाने के काम भी कर सकता हूँ आहार के लिए भी जा सकता हूँ, शौच के लिए भी 1-1$^{1}/_{2}$ कि.मी. दूर तक जाऊँगा ही और भी अनेक कार्यों में शारीरिक रूप से तो मैं पूर्ण जवान हूँ। लेकिन विषय भोगों के क्षेत्र में वृद्ध हूँ। साधना, त्याग, तपस्या के लिए हर समय जवान हूँ। इस प्रकार का चिंतन करते रहने से निश्चित ही मैं संक्लेश से बच सकता हूँ। इसलिए मेरी ऐसी धारणा है कि हमेशा अपने आपको वृद्ध समझो।

प्रश्न 18. : ब्र. बहिन - स्त्रीलिंग छेदने के लिए दीक्षा लेना आवश्यक है क्या?

उत्तर : पू. आर्यिका श्री - नहीं अति आवश्यक नहीं है, लेकिन सम्यग्दर्शन को प्राप्त करके सम्यग्दृष्टि बने रहना आवश्यक है। प्रथमानुयोग पढ़ो - गौतम स्वामी...आदि तीनों भाई के पूर्व भव पढ़ो - उन्होंने एक बार भी दीक्षा नहीं ली थी परंतु चाण्डाल की पर्याय में तीनों बहिनों ने एक साथ सम्यग्दर्शन को प्राप्त करके उसके साथ ही मरण किया सो देव बनी वहाँ से सीधी आकर गौतम...आदि तीनों भाई बने और दीक्षा लेकर मोक्ष चले गए और भी भरत चक्रवर्ती के 923 पुत्र निगोद से आकर सीधे मोक्ष चले गए।

दूसरी बात यदि हम यह कहे कि आर्यिका बन गए तो स्त्रीलिंग का छेद हो ही जायेगा तो द्रौपदी पूर्व भव में दुर्गंधा की पर्याय में आर्यिका बनी थी तो भी आकर द्रौपदी बनी। अंजना भी पूर्वभव में कनकोदरी की पर्याय में आर्यिका बनी थी और आकर अंजना बन गयी। अनंगसरा ने भी इतने लंबे समय तक भारी तपस्या की साधना की, फिर भी विशल्या बन गयी क्यों? क्योंकि इनका सम्यग्दर्शन छूट गया था, तभी तो सभी स्त्री बन गयीं नहीं तो सम्यग्दृष्टि कभी स्त्री पर्याय में नहीं जन्मता है। सो मेरे विचार से स्त्रीलिंग छेदने के लिए आर्यिका दीक्षा से भी अति आवश्यक सम्यग्दर्शन को बनाये रखना आवश्यक है और सम्यग्दर्शन श्रावक, श्राविका की अवस्था में भी रह सकता है सो दीक्षा नहीं हो पा रही है, नहीं ले पा रहीं हो तो संक्लेश नहीं करो, जब हो जाये सो लेने से भी नहीं चूकना ले ही लेना।